कुलाचार

(भाग-चार)

लेखक

रामो बिरूता

बिहार प्रशासनिक सेवा

ग्राम—भागाविला

जिला—सिंहभूम (बिहार)

प्रथम संस्करण-१९८२—३०००

कॉपी राइट—लेखक

मुद्रक

श्री लक्ष्मी प्रेस

बाकरगंज बजाजा, पटना—८००००४

(बिहार)

फोन : ५३६१७

④

तापरहित प्रकाश मे

(शक्ति)ईश्वरी ईश्वर(शक्ता)

के

कुल का ज्ञान

ताप युक्त प्रकाश मे

निज कुल का ज्ञान

कुलाचार

दम्पत्ति

पुत्र

प्रत्येक दम्पत्ति के लिए प्रत्येक पुत्र के लिय उपयोगी

आदिवासियों का

कुलाचार

(चौथा भाग)

दैविक जिंदगी का एक दैविक आचार है।

आचार

(CONDUCT)

धार्मिक उपलब्धियों का वाहन है।
कुल वाहन दिलाता कुल ज्ञान है।
कुल ज्ञान से होता कुल-पालन है।
कुल का पालन कुल धारण है।
और कुल धारण ही

कुलधर्म

है।

(धारयामि कुलं)

मैं कुल का धारण करता हूँ

"कुलाचारी रामो"

रचयिता :—

रामो बिरुवा बी० ए० (आनर्स) एम० ए०

स्थायी पता—ग्राम भागाविला
पोस्ट—भागाविला
थाना—मंझारी
जिला—सिंहभूम

(Copy Right Reserved)

ग्रन्थ का आधार—निराधार है।

पर निराधार से जो आया आधार है।
वही आधार ग्रन्थ का आधार है।
अपने आधार से निराधार तक।
निराधार से अपने आधार तक
होता जितना कुल का ज्ञान है।
रामो ने केवल किया संकलन है।

कुलाचार के प्रचारार्थ
कुलधर्म के संरक्षणार्थ
दान कीजिए पन्द्रह अर्थ
जो कभी न जाए व्यर्थ।

"कोल रामो"

विषय-सूची

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ सं०
१	प्राक्कथन	i
२	After all	vi
३	Oblation	viii
४	An Earnest Appeal	IX
५	Advice Divine	X
६	The Secret	1
७	The Battle	3
८	निरंकारी	4
९	आवश्यक	5
१०	प्राक्कथन, विचार	6
११	Opinion	8
१२	सचेतन	8
१३	कुलधर्म	10
१४	सम्पूर्ण कुल	10
१५	निर्दोष अराधना	20
१६	प्रस्तावना	22
१७	जय त्रयम्बकी	23
१८	मृत्यु भक्ति	26
१९	मृत्यु	27
२०	उपाय	30
२१	खुशी	31
२२	त्राण	32

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ सं०
२३	हल	32
२४	उपासना	33
२५	साधना	37
२६	Dear Aspirants	43
२७	आदिवासियों का	44
२८	Ab-original thought	45
२९	परम कुलाचार	47
३०	गर्व	48
३१	समर्पण	49
३२	स्वधर्म	51
३३	धर्म	52
३४	अनुभव के धर्म	54
३५	देव योग	56
३६	दण्डनीय	59
३७	तरल स्वच्छ	60
३८	गुप्त रहस्य	61
३९	असली शर्त्त	62
४०	त्राण चक्र	63
४१	जूठा (Untouchability)	65
४२	अद्वितीय सलाह	66
४३	Divine Advice	73
४४	परमोपदेश	74
४५	जात	77

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ सं०
४६	Life's Riddle	78
४७	प्रार्थना	79
४८	मांग	80
४९	हे, महाशक्तिमान	83
५०	स्थिति	85
५१	परिणाम	87
५२	नाम	89
५३	पूजा अर्पण	92
५४	कुल रीति	95
५५	वन्दना वन्दों की	97
५६	Pan-Ism	99
५७	Order	100
५८	सिलसिला	101
५९	यादु	104
६०	भूत	109
६१	भूत (जीव)	110
६२	गुलाम	117
६३	परीक्षणीय	120
६४	हवा	121
६५	स्थान	122
६६	समय	123
६७	सेवन	124
३८	भावना	128

Errata, अशुद्धियां

क्रम सं०	पृष्ठ सं०	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
1	8	8	Candal	Candle
2	9	5	धर	वर
3	26	23	Sqeck	Speck
4	34	24	उयान	ध्यान
5	37	1	वेदों	देवो
6	53	9	त्रिया	क्रिया
7	57	26	कल्याण लिए	कल्याण के लिए
8	62	3	होगा	हागा
9	72	20	प्रवध	प्रवंध
10	86	25	पूर्वोत्र	पूर्वोक्त
11	91	17	वही	नही
12	94	27	अर	और
13	98	10	श्रेत	श्रोत
14	100	9	Pecause	Because
15	107	17	सासी	खासी
16	110	3	कसा	कैसा
17	111	28	त्रिया	क्रिया
18	114	21	जन	जब
19	126	16	लेन	लेना

प्राक्कथन

संसार के वर्त्तमान के हरेक धर्मों में, सबसे दुर्भाग्य की बात यही है, कि उन धर्मों के हरेक भक्त एकवेक (all in one stretch) अवतारी (Incarnation, prophet, son of God) को ही जानना, पहचानना और मानना चाहते हैं। उनके नीचे किसी को भी नहीं, यहाँ तक की अपने को भी नहीं।

और फिर उनसे आगे, एकवेक, भगवान को, God को, और मालिक को, अलग-अलग नाम से ही जानना, पहचानना और मानना चाहते हैं। इसके अलावे किन्हीं को नहीं, यहाँ तक की एक साथ सबको भी नही। अपने पूर्वजों तक को भी नहीं।

और यह भी कैसे ?

मात्र किसी से नाम सीखकर, मात्र किसी के द्वारा बनाया हुआ चित्र देखकर उन्हे जानना, पहचानना और मानना चाहते हैं।

और मान न मान, मैं तेरा मेहमान के जैसा, उनको ही अपना मानकर एकवेक उनका ही भजन, कीर्त्तन, प्रार्थना एवं पढ़ना चाहते हैं। और किन्हीं का नहीं।

और इन प्रयासों के द्वारा, एकवेक, एक छलाँग में ही वे सबसे ऊपर की मंजिल में पहुँचना चाहते हैं। एकवेक वहाँ तक अपना ख्याल को पहुंचा-कर ऊपर आसमान के सबके मालिक को, अपने अलग गिरोह के, अलग धर्म के, अलग-अलग नाम से ही जानना, पहचानना और मानना चाहते हैं।

और यह भी कैसे ?

मात्र मामूली, दिखावटी, भजन, कीर्त्तन, प्रार्थना और पढ़ना के प्रयास से जानना, पहचानना और मानना चाहते हैं। और उसमें भी अपने तो दम भर खाकर और उनके लिए कुछ भी नही अर्पण कर, जानना, पहचानना और मानना चाहते हैं।

इससे किसी भी धर्म के, किसी भी भक्त को, उन (God) तक पहुंचने के अपने ख्यालों की यात्रा (meditational journey) का व्यक्तिगत

अनुभव, कुछ भी नही होता है। उन (God) तक के ख्यालों की यात्रा में अपनी आत्मा को आरम्भ से अन्त तक के दैविक मार्ग का पता ही नहीं होता है। क्योंकि और तो और, उनके पुत्र को ही, अपने पिता के यात्रा का जानकारी नही होती है। क्योंकि पिता, अनुभव के अभाव में, तत्संबंधी ज्ञान, पुत्र को दे ही नहीं जाते हैं।

ऐसी हालत में, पुत्र भक्त के द्वारा उन (God) तक का, जिंदगी का पहली यात्रा करना भी हो तो भला किस प्रकार सफल हो सकता है ?

फिर मालिक के निकट पहुंचे वगैर मालिक का निजी दर्शन के वगैर, मालिक का सही जानकारी, भी, भला, किस प्रकार सम्भव हो सकता है।

और पहली यात्रा का अनुभव के बिना, पहली निजी दर्शन का अनुभव के बिना, बाद के बारम्बार यात्राएँ, बाद के बारंबार दर्शन भी, भला किस प्रकार सम्भव हो सकता है।

लिहाजा, किसी से नाम सीखकर, किसी का बनाया हुआ रूप देखकर, अन्दाजी जानने, पहचानने और मानने के सिवाए और कोई उपाय नही है। वही दूसरे का भरोसा। उनका भरोसा, जिनको अपना भरोसा है ही नहीं।

तब यहाँ सवाल उठता है कि इस प्रकार के अन्दाजी जानने, पहचानने और मानने से, क्या मालिक (God) अपने भक्त को, भक्त समझकर, जानते, पहचानते और मानते भी हैं ?

नही, कदापि नहीं।

भला, एक तरफा पहचान की भी, किनसे किस प्रकार आशा की जा सकती है ? भला, एक तरफा सेवा की भी किनसे किस प्रकार आशा की जा सकती है ?

सही में कहा जाए तो उन (God) को, निजी तौर से, अपने प्रथम ज्ञान (First hand knowledge) से, पहले जानना, पहचानना और तब मानना ही सही मानना है।

पर यह हो भी तो कैसे ?

यह तो इस लोक से उस लोक तक अपने मन एवं बुद्धि के ज्ञान यात्रा के बिना, विवेक ज्ञान यात्रा के बिना सम्भव नही है। मात्र शैक्षणिक ज्ञान (Academic knowledge) के द्वारा तो संभव नही है।

यह तो केवल आध्यात्मिक ज्ञान (Spiritual knowledge) के द्वारा ही सम्भव है। जो संयम नियम के, दैविक अनुशासन के, साधना के बिना सम्भव नही है।

तो इससे प्रतीत होता है कि संसार के वर्त्तमान धर्म, किन्हीं के नाम पर चलाए जा रहे धर्म, जितना आसान है, जितना सस्ता है, उतना आसान, उतना सस्ता और कोई चीज नहीं है।

क्योंकि कोई भी वस्तु बिना मेहनत के, बिना मूल्य के मिलता नहीं है। परन्तु धर्म तो बिना मेहनत, बिना मूल्य के ही मिल जाता है। इसको प्राप्त करने के लिए, तो उस धर्म के किन्हीं के फूलों जैसे मुलायम बातों के बहकावे में, आ जाना मात्र ही आवश्यक होता है। या उस धर्म के किशोरी (damsel) के प्रेम में फँस जाना मात्र ही आवश्यक होता है।

फिर उसके बाद तो उस धर्म में दोस्तों के स्वागत की कमी नही है। उस धर्म के धर्म गुरु के स्वागत की कमी नही है। उस धर्म के परिवारों के स्वागत की कमी नही है।

फिर उसके बाद तो, उस धर्म के लोगों के, द्वारा ही, इंटों एवं पत्थरों के जोड़ाई से बनाया हुआ, विभिन्न आकार एवं प्रकार के मालिक (God) के घरों का, दरवाजा भी खुला ही मिल जाता है। और उस घर के अन्दर उस धर्म के गुरु के द्वारा उपलब्ध उन (incarnation) की आकृति का दर्शन भी, चित्र या मूर्ति के रूप में, आसानी से ही हो जाता है।

पर मालिक (God) के या उनके दूत (incarnation) का असली रूप का निजी दर्शन, दुर्लभ हो जाता है। अपने सहित, अपने जन्म से संबंधित सभी, अनुज या पूर्वज, दिवंगत आत्माओं का निजी दर्शन दुर्लभ हो जाता है। क्योंकि उस ओर के ज्ञान के फाटक का पल्ला बन्द हो जाता है।

परन्तु इसके विपरीत ज्ञान का अर्जन, विवेक ज्ञान का अर्जन, जितना महँगा (dear) है, उतना महँगा संसार का और कोई चीज नहीं है। ज्ञान

एवं विवेक ज्ञान के रास्ते, आत्मिक दैविक यात्रा करना, जितना कठिन है, उतना कठिन और कोई काम नहीं है।

भला सोचने की बात है, कि नीचे ही नीचे धर्म के रास्ते, धरती पर यात्रा करना, जितना आसान हो सकता है; नीचे से ऊपर, और ऊपर ही ऊपर की ओर, सिर की चोटी के सीध में, या धरती के ऊपर, धरती के सतह के समानान्तर, हवा में यात्रा करना भला किस प्रकार आसान हो सकता है ?

ऐसे यात्रा में शरीर को त्यागकर, केवल आत्मा का ही यात्रा करना भला किस प्रकार आसान हो सकेगा ? फिर यात्रा की समाप्ति के बाद, आत्मा (रूह, spirit) को उसी शरीर में वापस लौटाना भी भला किस प्रकार आसान हो सकेगा ? और वैसा ही बारम्बार आत्मा का शरीर से निकलना, रास्ते में कई आत्माओं एवं देवों से भेंट करना, मालिक तक का यात्रा करना, और मालिक के निजी दर्शनों के अनुभवों को बटोर कर, उसी शरीर में फिर वापस लौटना, भला किस प्रकार आसान हो सकता है ?

अतः इस प्रकार के ठोस पर कठिन और महंगा, आध्यात्मिक अनुभवों के ज्ञान के अभाव में, सस्ता, आसान पर अन्दाजी धार्मिक ज्ञान से, किनको कितना लाभ मिलता होगा; सोचने की बात है ?

मात्र एक फोटा सान्त्वना (mere false consolation) के सिवाए और हो हो क्या सकता है ?

यहाँ सोचने बिचारने की बात है, कि जो खूद अपने आत्मा को जानता, पहचानता, नहीं है। जो अपने माँ आत्मा, पिता आत्मा को जानता, पहचानता नहीं है। और उसी प्रकार जो अपने जन्म के सिलसिले के, पूर्वज आत्माओं को जानता, पहचानता नहीं है, वह भला, एकवेक, परमात्मा, परमपिता, परमेश्वर, God एवं मालिक (आत्माओं के आत्मा) को किस प्रकार जानने, पहचानने सकेगा ? और उनके ही दूतात्मा (Incarnation Spirit) को भी वे किस प्रकार जानने, पहचानने सकेगा ? और सही जाने पहचाने बिना, भला किस प्रकार मान भी सकेगा ? सोचने की बात है।

फिर इस जानने, पहचानने के शुभ कार्य के लिए काबिलियत की भी तो आवश्यकता है। जो अपने आत्मा, अपनी पत्नि आत्मा, अपने पुत्र-पुत्रों

आत्मा एवं पूर्वज आत्माओं के जानने, पहचानने, दर्शन करने और तब मानने के लायक नहीं है। वे भला एकवेक अवतारी आत्मा, के जानने, पहचानने एवं दर्शन करने के लायक किस प्रकार हो सकते हैं ?

जो छोटे देवी देवताओं (gods and goddesses) के जानने, पहचानने, दर्शन करने और तब मानने लायक नहीं हैं, वे भला, एकवेक बड़े दैव (God) को जानने, पहचानने, दर्शन करने और तब मानने लायक किस प्रकार हो सकते हैं ?

और ऐसी काबिलियत के अभाव में धर्म के अन्तर्गत उनका भजन-कीर्त्तन, प्रार्थना एवं पढ़ना भी, भला किस प्रकार प्रभावकारी हो सकता है ? किस प्रकार सही निर्देशित (well directed) हो सकता है ? सोचने की बात है।

आत्मा (Power), दूतात्मा (Super Power) एवं परमात्मा (Supreme Power) को जाना, पहचाना जा सकता है। उनके निजी दर्शन के प्रथम ज्ञान का, अनुभव किया जा सकता है। उसके लिए काबिलियत हासिल की जा सकती है।

पर एक सही तरीके से। अन्य प्रकार के जैसे-तैसे तरीके से नहीं।

श्री रामो बिरूवा, प्रबन्ध निदेशक, जिला ग्रामीण विकास अभिकरण, बोरिंग केनाल रोड, पटना, ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर आत्मा, दूतात्मा एवं परमात्मा को सही जानने, पहचानने, मानने एवं अनुभव करने के लिए, आवश्यक तौर तरीकों एवं दैविक शर्त्तों का अपने ग्रन्थ "कुलाचार" चौथा भाग में बहुत ही महीन ढंग से विस्तार के साथ वर्णन किया है। तथ्यों को, व्याख्या करने के उनके ढंग से मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। उनका व्याख्या सरल एवं सटीक हैं। जिसे हरेक आदमी आसानी से समझ सकते हैं।

मेरा विचार है कि आप भी उनके उस ग्रन्थ का विधिवत अध्ययन करें। और उसमें संकलित ज्ञान को अपने अन्य श्रोतों से प्राप्त ज्ञान के साथ मिलान भी करें।

अगर उपयुक्त मालूम पड़े तो मात्र सराहना ही नहीं करें। वरन उनका अनुकरण भी करें। और इस प्रकार उस ज्ञान से अपना लाभ उठावें।

आखिर जब तक हम अपने को दैव के पसन्द के लायक नहीं बनाते हैं, तब तक हम दैव के निकट किस प्रकार पहुंच सकते हैं ?

विनीत

श्री पूर्ण चन्द्र बिरूवा

भूत पूर्व वन मन्त्री, बिहार

ग्राम वो पो०—लागड़ा

जिला—सिंहभूम।

....

After all——the question arises :—

Whether we should do
For the Divine
As we like ?

Or whether we should do
For the Divine
As He likes ...?

Kulachari Adibasis do
For the Divine
As the Divine likes.

However busy you may be, in your Wordly affairs
I advise you to go through
KULACHARA between 9 P. M. and 10 P. M. in
Seclusion and amidst the fragrance of
Incense, in your room, every evening.
But if you believe in
"Eat drink and be merry"
I have nothing to say

....

अगर आपकी जिन्दगी इस विचार धारा की हो, कि
"जावत जीवेत सुखं जीवेत
ऋणं कृत्वा घृतं पीवेत।"
तो मुझे कुछ नहीं कहना है।
क्योंकि वैसा खाओ, पीयो, और मौज करो की जिन्दगी
तो पशुओं का ही है।
भला, पशु को कौन विद्वान, कौन ज्ञानी, क्या कहेगा।
पशु तो पशु ही है।

....

Please do not give trouble to the Female Forms
Because respect to the Female Forms is your Sadhna.
Or else you will have to face the Divine Anger.

Writer

OBLATION

Sirma ren Singhbonga.
O, Divine, in Celestial.
Oblations to Thee

I do not want to come down so low.
By indulging in the politics of Human beings.
I want to go up and up, with son to follow.
By indulging in the politics of Divine beings.
And enter in to Thy courtyard unseen.
With Thy grace and with Thy vision

O, Supreme Being.
The Being of all beings.
Oblations to Thee. Oblations to Thee

Dedicated to the
Kulacharis of the Nation.
And to the
Kulacharis of other Nation.

Kindly be in Purity
And allow others also to be in Purity.

"KULACHARI RAMO"

An Earnest Appeal

There is no end to the Fashion
There is no end to the Complexion.
But there is an end to the Donation.
Which takes place only in Occasion.

Ramo in ancient Kulachara topic.
Has written this Unique Epic.
Let us preserve whatever is Original.
In the culture of an Ab-Original.

For propagation of Kuldharma Sanatan.
And for It's purest preservation.
Here is your precious occasion.
For making a fabulous Donation.

.... — ....

When ones own body is the Temple
There is no need of any other Temple.
So for the shelter of Body Temple
It is better to construct House Temple

....

Note--House Temple—Dharamshala

With best
wishes and
Compliments From
A, Kulachari

Advice Divine

O, damsels,
It is not necessary to marry.
O, damsels,
It is not necessary to re-marry.
If you are not liked,
By the human beings.
If you are left behind,
By your husband.
Take this advice of mine.
Please remain virgin.
And be Yogin.
It is certain
That you will be liked.
You will be kissed.
By the Divine Being.
So O, damsel Please remain virgin.

....

O, Parents, O, brothers.
Do not compel them.
To marry or to re-marry.

Note :—Because, their Virginity is their Sadhana (exertion) to attract the Divinity.

It is the divine right of an woman to kill a man who tries to destroy her virginity.

Because no body has right to spoil any other body. Because she as the House Mistress is the real base of Kulachara.

By the direction of the Divine Mother
Writer.

The Secret

According to the Ho Ab-original's

KULACHARA

In Reality
THE END OF THE
DIVINE KNOWLEDGE
(VEDANTA)
Consists in Experiencing The

DIVINE

In Invisible Celestial Qualities of

TOUCH, TASTE, SMELL, SOUND & COLOUR reflected in BLISS beyond expression by the adherent SONS in succession-

This the discendant after discendant of

THE KOLS of INDIA especialy of Singhbhum, Ranchi, Palamau, Hazaribagh and Santhal Parganas have been experiencing since time immemorial without expression.

This has been the SECRECY of their unwritten SECRET RELIGION.

KULDHARMA

coming down from mouth to mouth and ears to ears from time immemorial

The invisible desire coming out automatically from the depth of the body motivates the body's knowledge (mind) which activises the limbs of the body into action.

This is nothing but the invisible influence of the Divine, and under this :—

The combination of Holi-actions conforms into conduct.

The repetition of Holi conducts conforms into a culture.

The adoption of Holi cultures conforms into a Religion.

But the Holiness is not only external. It is both external and internal.

Without which none can experience.

The Divine

Under any Religion with whatever EFFORT and DEVOTION.

....

You will acknowledge
The end of knowledge
Not in the scripture
Not in the culture
But all in the Nature
If you can venture

——

The Battle

Often I am facing
The minds great in-fighting
To select between the two
Above the top or below the toe
Heavenly adventures
Or the Worldly pleasures
Amidst the Angels
Or with the damsels
Internal self satisfaction
Or external depiction
Concealed in heart below
Or reflected in pomp and show ?
A life of Divine Power
Or a life devoid of Power ?
At last with great bravity
O, my manes in divinity
I have won the battle
By rejecting the shows in total
In favour of the Kuldharma Sanatan
By caring not for the woeful satan

——

Note-- : woeful satan = worldly attachment

निरंकारी

वदलते हुए अपना आकार है।
निरंकार ही हो जाते साकार है ॥
धरती पर दिखाकर निखार है।
साकार ही हो जाते निरंकार हैं ॥१॥

भक्ति आपकी जिस प्रकार है।
देख सकेंगे दोनों ही आकार है ॥
अतः मेरा विचार इस प्रकार है।
आकारों का तकरार वेकार है ॥२॥

....

आप आसानी से मिट्टी (सिक्के) वटोर सकते है।
पर आप आसानी से ज्ञान (दैविक ज्ञान) वटोर नहीं सकते हैं।

Note—Un-menifest (अव्यक्त) becomes

menifest (व्यक्त) in subtle (सूक्ष्म) and gross (स्थूल) forms.

Menifest forms, (gross and subtle) in due course of time becomes un-menifest (Formless)

This is the Cycle of Divine Evolution (जगत) Every body has its own evolution (जगत) i.e. movement in the space. So is the movement (evolution) of his genealogy (कुल).

———

आवश्यक

यह ग्रन्थ उपन्यास नहीं है। कहानी नही है। केवल दैविक संकेतों पर आधारित गुह्यत्तम ज्ञान का संकलन है।

अतः इसका अध्ययन एकान्त शान्त एवं अत्यन्त पवित्र वातावरण में ही होना चाहिए। और अपने ध्यान को मर्त्यलोक से दैव लोक तक प्रसारित करते हुए ही अध्ययन करना चाहिए।

तब तो अध्ययन का लाभ है। तब तो अध्ययन का आनन्द (happiness) है। पर अध्ययन के पश्चात् इसका पालन हो तो परम आनन्द (Bliss) है।

लोग कुलाचार को पढ़कर,
न जाने मन में क्या सोचकर,
पूछते हैं लिखने का मतलब क्या है ?
मैं भी सृजन की क्रिया बताकर,
निज कुल का सिलसिला जताकर,
पूछता हूँ जीने का मतलब क्या है ?
प्यारो फूलों की खुशबू चन्द दायरे मे चन्द घंटों की है।
किन्तु सूकर्मों की खुशबू जमीन से आसमान तक की है ॥

ध्यातव्य— सृजन एवं पुनः सृजन के सनतन नियमों का स्मरण और उसके पृष्ठ भूमि में निज कुल के प्रति कर्त्तव्य पूजन, सूकर्म है।

———

प्राक्कथन

मैं देखता हूँ कि सुख देने को अपना बदन।
न जाने आपने जुटाये कौन सा नही साधन।।
थकने से बचाने को जुटाय आपने एक वाहन।
सूरक्षित रखने को बनाए सुन्दर एक भवन।।
जिलाने को आपने पकाए स्वादिष्ट भोजन।
लिटाने को आपने बिछाए मुलायम कुशन।।
पर पूछता हूँ आपसे बताइये ऐ सज्जन?
आत्मा को सुख देने जुटाय तूने कौन सा साधन?
जुटाय अगर नहीं है, आपने कोई भोजन।
कीजिए नहीं अन्याय, यही हैं आपका जीवन।।
करके सदा रामों के कुलाचार का अध्ययन।
हर्षित करें वदन सहित आत्मा का भी मन।।

ध्यातव्य—अच्छे या बुरे गुणों से युक्त, अपने शरीर को तो आप पेट भर भोजन देते हैं। कभी तो इतना भोजन देते हैं कि बेचारे शरीर को ढकार करने को भी मजबूर कर देते हैं।

गुणातीत अपने आत्मा को आप कौन सा भोजन देते हैं। अगर कुछ नहीं देते हैं, तो मेरी बात मानिए। इतना अन्याय मत कीजिए।

आत्मा को अपनी बुद्धि के द्वारा, विवेक ज्ञान (Divine knowledge) का सम्मान जनक भोजन दीजिए। अपने जीवात्मा को दैविक ज्ञान का सम्मान जनक दैविक भोजन नहीं देना ही अन्याय है। निज जीवात्मा का ही जीव हिंसा है।

विचार

कुलाचार प्रथम भाग जब छप हो रहा था, तो उसी समय, उसके कुछ अंशों का अध्ययन करने के बाद, लोगों ने यह विचार व्यक्त किया था, कि कहानी एवं उपन्यासों को पढ़ने में समय गँवाने के बदले तो ज्ञान के इसी तरह के पुस्तकों का अध्ययन करना अच्छा है।

मैं तो कहूँ, अच्छा ही नहीं उत्तम है! क्योंकि कुलाचार ग्रन्थ के अध्ययन से कोई समय नहीं गंवाता है। समय (Time) का सदुपयोग ही समय (काल) की पूजा है। खुद हम समय हैं। क्योंकि हम समय के द्वारा सीमित हैं। अतः अपने समय का सदुपयोग अपना ही सदुपयोग है। अपने समय को सस्ता बिताना अपने को ही सस्ता करना है। भला ऐसा कौन करना चाहेगा?

जब कभी आपका मन बहुत चिन्तित हो जाए, उस समय एकान्त में कुलाचार ग्रन्थ के अध्ययन में ध्यान मग्न हो जाएँ। निश्चित है कि आपके मन को शांति मिलेगी।

अपने घर में कुलाचार ग्रन्थ का होना ही अपने आप में बहुत महत्व रखता है। इसलिये प्रत्येक दम्पति को अपने घर में कुलाचार ग्रन्थ अवश्य रखना चाहिए।

हर किसी को, अकेला अपने को काबिल समझना उचित नहीं है। क्योंकि अकेला अपने को काबिल समझकर भी कोई काबिल नहीं हो सकते हैं। थोड़ी देर के लिए शरीर से, किसी कमजोर के लिए वह भले हीं काबिल हो जाय तो हो जाए, पर आत्मा से काबिल कभी नहीं हो सकते हैं।

क्योंकि जब वे एक शरीर के एक आत्मा के काबिल है, तो उसके विपरीत कुलयोगी तो अपने जन्म के सिलसिले के पूर्वज पित्तर आत्माओं सहित कई देवताओं के साथ कई गुणा अधिक काबिल हो जाते हैं। बशर्ते कि वे सही कुलाचारी हैं।

———

Opinion

One person had remarked
Kulachar is Supper Social.
Another person had remarked
No, Kulachar, is Super Mental.
Yet another had remarked
That Kulachar is not for All.
Accepting what has been remarked
I say Kulachar is Son's candal.
To illuminate himself and his Ancestors
In this world and in God's citadel.

सचेतन

पुत्र पुत्री के रहते तक,
इस लोक से उस लोक तक,
पिता बनकर जब पिता का पूजा नहीं मिले।
तो पिता बनकर ही क्या फायदा है ?
माँ बनकर जब माँ को पूजा नहीं मिले।
तो माँ बनकर ही क्या फायदा हैं ?

आपने, अपनी जिंदगी में पितरों का पूजा नहीं किया। और इस प्रकार आपने-अपने रसोई (आर्दिग-kitchen) में पित्तर पूजा (कुलाचार) के पवित्र परंपरा को अपने पुत्र एवं पुत्री को नही सिखाया उसके प्रभाव को आपने नहीं दिखाया।

अब आपके मरने की वारी आ गई है। आप शरीर से मर जाएँगे। अब बताईये तो पितर के रुपमें, आपके आत्मा का, पवित्र भोजन पानो के अर्पण के साथ कौन पूजा करेंगे ?

हरेक माता पिता को कोल विधि मे अपनी ही पूजा पुत्र-पुत्री के द्वारा पवित्र रसोई में होते रहने की चिंता करना चाहिए; न कि क्षणिक लाभ के लालच में अपने जन्म के सिलसिला से परे दूसरे को पूजा होते रहने की चिंता करना चाहिए।

अपने घर के पवित्र रसोई में अपने पित्तरों की सतत पूजा, अपने घर के मालिकों के सतत स्वागत की पूजा है। घर के बाहर, नदी किनारे की पूजा मानो एक नौकर की पूजा है। और दूसरे के द्वारा पूजा मानों एक नालायक पुत्र-पुत्री की पूजा है।

....

इस धर्म की यह जिंदगी ही क्या जिंदगी है ?
जिसमे अपने आत्मा की पूजा को गुंजाईस नही हैं ?
उसकी जिंदगी तो ठीक वैसा ही है।
जैसा एक जानवर की है।

ख्यालो में न तो माता पिता है।
न मन में उनके पूजा की भावना हैं।
आप दूसरे का पूजा करते हैं।
आपका पूत्र भी दूसरे का पूजा करेगा।
दूसरे के तो पूजा होते हैं।
पर बताइए आपका पूजा कौन करेगा ?

———

कुल धर्म

(A Religion of Divine Totality)
(A Religion of Divine purity)

संपूर्ण कुल ज्ञान

जिस प्रकार जमीन पर
उपयुक्त वातावरण के बिना
पौधे उग नहीं सकते हैं।
उसी प्रकार आदमियों पर
उपयुक्त पवित्रता के बिना
ज्ञान जग नहीं सकते हैं।
जिस प्रकार जिंदगी में
समान स्वभाव से बिना
किसी से दोस्ती हो नहीं सकती है।
उसी प्रकार जिंदगी में
देव तुल्य हुए बिना तो
देवों से दोस्ती हो नहीं सकती है।

....

देवों के सेवार्थ
परिवारो के कल्याणार्थ
कोलों को समर्पित

....

आपका मूल धर्म है कुल धर्म।
अपने घर से स्वर्ग तक
वरन उसके बहुत आगे तक
पुत्र के द्वारा आपका पूजा होने का ही धर्म है।

———

संपूर्ण कुल

शुरु में पति एवं पत्नि एक दम्पति बनते है। पुत्रों एवं पुत्रियों का एक परिवार बनाते हैं। समय के गुजरते एक या एक से अधिक सगे पुत्र भाइयों के परिवारों का पिता से पिता के सिलसिले में दादा का वंश बनाते हैं।

समय के गुजरते शुरु के एक पिता के सिलसिले के, कई परिवारों के कई वंशों का निकट अतीत (near past) का एक स्थानीय कुल बनाते है। यह इस स्थान (ग्राम) के प्रथम प्रवर्त्तक पिता का एक कुल होता है।

उस स्थान (ग्राम) के उस प्रथम प्रवर्त्तक कुल पिता के संबंधों में, कई स्थानों के कई प्रथम प्रवर्त्तक कुल पिताओं के सूदूर अतीत (distant past) के प्रथम प्रवर्त्तक कुल पिताओं के एक अग्रणी कुल पिता बनते हैं।

उसी अग्रणी कुल पिता के गुणो के आधार पर, या कर्मों के आधार पर आग्रणी कुल पिता के गोत्र (किलि) बने है। किलि कुल बने हैं।

जैसे—विरूवा किली कुल डिवरू वीर का कुल है। उनके वीरता के गुण का कुल बने हैं। उसी प्रकार अन्य भी बने हैं। उस संबंध में अलग से विशेष चर्चा की जायगी।

पर कुल के गरिमा को कायम रखने का दायित्व, किलि कुल के उत्तराधिकारी पुत्रों का है।

आदिवासियों के सभी अग्रणी किलि कुल प्रवर्त्तक प्रथम अग्रणी पिताओं के पिता मरंग बोंगा (महादेव शिव जी) हैं। माता बिन्दी एरा (पार्वती देवी) हैं।

यही, इन्ही के द्वारा सूदूरतम अतीत (distant and distant past) में एक विशाल मैदान के एक विशाल समूह बोड़ भोंजी-जामताड़ा (A place of group independent Kitchen) में अपने पुनः सृजन (re-creation) में रत (busy) पुत्रों याने अग्रणी पिताओं के जन्म के सिलसिले के पुत्र पौत्रों में अग्रणी पिता (प्रथम किलि प्रवर्त्तक कुल पिता) के खून के शुद्ध धारा का उत्तरोत्तर शुद्ध अवतरण (ever continuous flow of ab-original fathers pure blood in sons after sons) के लिए एवं आपसी वैवाहिक संबंधों के शुद्ध सिलसिला को कायम रखने के लिए और गलती से एक ही अग्रणी कुल पिता के सिलसिले के पुत्रों-पुत्रियों के, गलत वैवाहिक संबंधों के द्वारा दुषित खून (polluted blood) का परिवार बनने से बचाने के लिए उस समय के उस स्थान पर अपने-अपने रसोई में उपस्थित अपने-अपने पवित्र रसोई बनाने में व्यस्त प्रत्येक अग्रणी पिता के गुणो एवं भूल चुकों के आधार पर, किलि (clan गोत्र) का बटवारा किया था। जो अभी कोल आदिवासियों का किलि है।

उनका किलि कुल (genealogical clan) है। अभी के प्रत्येक उत्तराधिकारी पुत्र का सुदूरतम अतीत का किलि कुल है। जिसके अन्दर एक किलि के सभी के सभी सहोदर भाई (हागा) है। और दूसरे किलि के सभी सहोदर समधी (वाला) है। उसके अलावे अन्य नहीं है।

इस प्रकार आदिवासियों के कुलधर्म में कितना सुन्दर सिलसिला है, कितना सुन्दर विभाजन है, कहा नहीं जा सकता है। क्योंकि यह मरंग बोंगा (महादेव) का प्रबंध है। ऐसा सिलसिला अन्य किस धर्म में है, खोज कर देखिए ? इसी किलि बैटवारा के बैठक (Assembly) के कारण ही महादेव को कोलों के द्वारा दुपुव दिसुम मरंगबोंगा या दुपुव पना मरंगबोंगा (Great Lord of the country's, assembly) कहा जाता है। अभी तक पूजा में उन्हे उसी प्रकार ही संबोधन किया जाता है।

और इसी किलि बैटबारा के कारण ही कोलों के परवों (Festivals) में खासकर बाह परब (Flower Festival) एवं हेरो परब (Broad casting Festival) में बड़ भँजी-जामताड़ा (Invividual group Kitchen) का रिवाज अभी तक चला आता है। जिसमें गाँव के बहुत से घर परिवारों के कर्त्ता रसोई के अपने अपने सामानों के साथ देसाउली (minikailash) के निकट इकट्ठा होकर अपना अपना रसोई करते हैं। और उस पवित्र रसोई (पकवान) का मरंग बोंगा सहित अपने अपने कुल के सभी पित्तरों को उनके नाम से आह्वान कर, पूजा करते हैं। भोग अर्पण करते हैं।

यह रिवाज कितना पुराना है ? सोचा नहीं जा सकता है। अतः यह गैर कोलों, के द्वारा भी कहा जाता है कि मरंग बोंगा कोलों के हीं अधिष्ठात्री पित्तर देव (Original begotter God) है। ये देव अभी तक पवित्र रसोई वाले घरों में पित्तरो के साथ भोग स्वीकार करते हैं। जिस घर में स्वीकार करते हैं वहाँ सुख शांति है। और दुषित परिवारों के अपवित्र रसोई का भोग अर्पण वे देव स्वीकार नहीं करते हैं। और वैसे परिवारों के घरो में दुःख ही दुःख है।

इसे परीक्षा करके देखा जा सकता है। और यहीं तक (याने मरंग बोंगा महादेव) तक के नैसर्गिक लोक (Visible World) के कुल को ही तापयुक्त प्रकाश का कुल कहते हैं।

अतीतों के अतीत में, सूक्ष्म रूप (In subtle Form) में सावित्री (नांगे एरा-सामोम एरा-अर्ध नारीश्वर—One-none-dual) से हुआ है। नांगे एरा ने अपने ही एक रूप से दो रूपों (मरंग बोंगा अण्डो : बिन्दी एरा—सोना जुंगुड, जुंगुड एरा—महादेव एवं पार्वती) में प्रथम दैविक दम्पति के रूप में प्रगट होकर, प्रथम सृजन (First Creation) का कार्य आरम्भ किया था। ये सूक्ष्म दैविक रूप दम्पति ने, उनमें स्वतः जागृत इस इच्छा से कि हम अधिक हों, प्रथम सूक्ष्म रूप देवी देवताओं का सृजन किया था।

वे ही दो सूक्ष्म रूपों, प्रथम दैविक दम्पत्ति (मरंग बोंगा एवं बिन्दी एरा) ने प्रकृति के सम्पर्क में आकर, स्थूल रूपों में प्रगट होकर, अपनी स्वतः जागृत इस इच्छा से कि हम अधिक हों, स्थूल रूपों (आदमियों) का सृजन किया। अपने रूपों के रूप में नर-नारियों का सृजन किया। इस स्थूल रूप दम्पतियों के प्रथम सृजन के बाद के पुनः सृजन के क्रम में हम आप सभी कोई हैं।

अतः महादेव (मरंग बोंगा) एवं महादेवी (बिन्दी एरा—जुंगुड एरा) कोलों के सृजन एवं पुनः सृजन के प्रथम कुलेश्वर एवं कुलेश्वरी हुए। अब इनके उत्पत्ति कर्त्ता·····-अर्धनारीश्वर (नांगे एरा—सामोम एरा) की उत्पति सींग बोंगा सुनहला प्रकाश रूप (Golden Divine Light--आदित्य) से हुआ है।

यह प्रथम रूप—तापरहित प्रकाश रूप है। उसी प्रकाश रूप (सींगबोंगा) में देवलोक के दैविक कुल के सभी देव, पित्तर लोक के सभी पित्तर एवं पित्तरों के कुल के वर्त्तमान परिवार (existing families) के सभी कोई निहित (included) है।

आखिर सींगबोंगा की कृपा से, सींगबोंगा से ही (सूक्ष्म रूप में) सभी आते (जन्म लेते) हैं। उन्हीं की कृपा से प्रकृति के संपर्क में, स्थूल रूपों में प्रगट होकर जीते हैं। और अन्त समय (मृत्यु का समय) होने पर, सभी सींग बोंगा के पास ही (कुल के कतार में) जाते हैं और सींगबोंगा में ही प्रवेश पाते है। विलीन हो जाते हैं।

हम कोल, सींगवोंगा (प्रथम रूप) के ही अंश हैं। प्रकाश का अंश को हमारा शरीर धारण करता है। जब तक शरीर धारण करता है, तब तक हम जीवित हैं। प्रकाश रूप जब शरीर से निकल जाता है तो हम शरीर से मर जाते हैं। इसी अंश प्रकाश रूप को शरीर से नहीं निकलने देने के लिए ही पूर्ण प्रकाश रूप सींगवोंगा का हम पूजा करते हैं। पर शरीर से मरकर भी सींगवोंगा के अंश प्रकाश रूप में हम कभी मरते नहीं हैं। और अंश प्रकाश के रूप में रहने का समय बीतने के बाद, हम अपने जन्म के श्रोत सींगवोंगा में ही पुनः प्रवेश पाते हैं। और पुनः आते (जन्मते) हैं।

यही कारण है कि, शरीर के मरने के बाद, इसी अंश प्रकाश रूप (रोवा) को हम अपने पवित्र रसोई कोठरी में वास करने के लिए, मृत्यु के पाँच दिनों के अन्दर वापस बुलाते हैं। और पवित्र भोजन पानी के भोग अर्पणों से उन्हें हम हमेशा खुश रखते हैं। अन्य आचारियों की तरह उन्हें हम भूखे प्यासे, त्यक्त (abandoned) हालत के दुःख में नहीं छोड़ते हैं। ऐसा होना भी चाहिए। क्योंकि हम कुलाचारी हैं। क्योंकि हम कोल हैं। यही तो गैर-कोलों के साथ का अन्तर है। कौन उत्कृष्ठ हैं? कौन निकृष्ठ हैं? खुद ही अंदाज कीजिए।

जीवित शरीर रूप अंश प्रकाश—हम, अपने कुल के सिलसिले के, मृत अंश प्रकाशों (पित्तरों) एवं देव कुल के दैविक अंश प्रकाशों के साथ ही प्रकाशों के श्रोत प्रकाश (सींगवोंगा) के सम्पूर्ण कुल का निस्वार्थ सेवक पूजारी होने के कारण ही कोल हैं। अपने कुल का रक्षक एवं सेवक होने के कारण ही अन्य लोग हमें कोल कहते हैं। हमारा कितना उपयुक्त संबोधन है? सोचने की बात है।

आखिर जैसा कोल है। वैसा कौन है? कोल के अलावे किनका प्रकाश रूपों का सिलसिला है? सोचकर देखिए। तो आखिर इतने उत्तम संस्कृति से, एक कुल सिलसिले के, खास अपनी संस्कृति से, आप क्यों विचलित होना चाहते हैं?

आप प्रकाश रूपों के सिलसिले के हैं। अन्य नहीं हैं। आपकी संस्कृति सिलसिले की संस्कृति है। अन्यों की बिना सिलसिले का संस्कृति है। अतः आप कुलीन (noble) हैं। अन्य कुल विहीन हैं। आप अपने को अन्यों से मिलान करके तो देखिए।

दैविक प्रकाश (सींगवोंगा) की उत्पति वृहद् ब्रह्माण्ड (रूप रहित, नाम रहित, सीमा रहित परः ब्रह्म) तत्वों के घनी भूतिकरण से हुई है।

इस प्रकार सींगवोंगा से आरम्भ होने वाली संपूर्ण कुलों का प्रथमों में प्रथम श्रोत बृहत् ब्रह्माण्ड (दंग दंग वुरू) ही है।

दंग दंग वुरू रेन सींगेवोंगा,
हेन्दे वुरू (कैलाश) रेन मरंग वोंगा,
देला, हगञो वू सेवा किगा ।।
देला बलञो वू सेवा किगा ।।
हातु वुरू (mini Kailash) रेन हातु वोंगा
ओवाः आदिंगेरेन ओवाः (आपु) वोंगा,
देला हगञोवू साड़ा किगा ।।
देला बलञो वू सेवा किगा ।।
दाञः गामा कोको आगुवा वुआ.
हासु दुखु कोको आतोमा वुआ,
नीरम होमोड ते वु वोंगा कोआ ।।
आको सानंग लेका वू वोंगा कोवा ।।

इसी सिलसिले में, पौराणिक से भी पौराणिक वाह परख का (Song of Flower Festival) उधृत करता हूँ।

नीरे नीरे मेगो होरो लिपा लाड़े
सेने सेने मेगो कुलै चुड़ चुड़ु
दंग दंग वुरू दो को माँगर तडा ।।

हमारे ठीक ऊपर वृहत् ब्रह्माण्डीय आकाश (Sky) है। वही दंग दंग वुरू (Inverted or hanging Celestial Hill) है। जिसमें सींगवोंगा है, और उनके देव कुल के अन्य बहुत सारे देवी देवताएँ हैं।

इस लटकता पहाड़ के नीचे मन के साथ प्राकृतिक शरीर रूप में हम (कोल) हैं। हमारा शरीर रूप मन के मुकाबिले बहुत कम तेज चाल वाला है। इसे प्रकृति के होरो (कछुआ) से मिलान किया गया है।

इसके विपरीत हमारा आत्मा शरीर के चाल के मुकाबिले कई गुणा अधिक तेज चाल वाला है। यहाँ तक कि हवा से भी अधिक चाल वाला है। अतः मन को उस गीत में प्रकृति के कूलै (खरगोश) के साथ मिलान किया गया है।

गीतकार शरीर एवं आत्मा को होरो एवं कुलै नाम से संबोधन करते हुए अगाह करते हैं कि हे होरो, (शरीर), तुम अपनी चाल को कुछ बढ़ादो और दौड़ो। सुस्थ मत हो, क्रियाशील हो जावो। और फिर कहते हैं कि हे कुलै (आत्मा), तुम अपनी चाल को धीमा करो। मत भटको। सोच समझकर चलो।

इस प्रकार समन्वय स्थापित कर समन्वित चाल ही चलो। अलग-अलग मत होओ। एक साथ ही रहो। नहीं तो (सचेत करते हुए) आकाश मण्डल (दंग दंग बुरू) के देवता शिकार पर हैं। शिकार कर रहे हैं और वे चंचल आत्मा एवं सुस्थ शरीर वालों की खोज (शिकार) कर रहे हैं। ऐसा वे (गीतकार) चेतावनी स्वरूप कोलों का गीत के माध्यम से शिक्षा दे रहे हैं।

सोचकर देखिए, यह बात सही है कि दैविक कार्य सुस्थ शरीर और अस्थिर आत्मा के द्वारा नहीं किया जा सकता है। दैविक कार्य तो क्या— दैविक कार्यों से संबंधित घरेलू कार्यों के लिए भी समन्वय स्थापित होना आवश्यक है।

इसी कारण ही इतनी उत्तम शिक्षा को, हमारे सुदूरतम अतीत के पुरखों (ancestors) ने एक गीत के द्वारा लोगों के समक्ष प्रस्तुत किया है। जिसे हम हरेक वाह परब में गाते चले आ रहे हैं। और हमारे पुत्र-दर-पुत्र भी गाते ही चले जायेंगे।

इस गीत से संबंधित श्री पूर्णचन्द्र विरूवा, भू० पू० वन मंत्री, बिहार, साकिन लगड़ा के सवाल का जवाब पूर्ण होता है।

संक्षिप्त में, तापयुक्त प्रकाश के नैसर्गिक कुलों और ताप रहित प्रकाश के दैविक कुलों का यही संपूर्ण ज्ञान है। संपूर्ण कुल का संपूर्ण ज्ञान है। ऐसे कुल ज्ञानी को कुलज्ञ कहा जाता है।

ऐसे कुल ज्ञान की पृष्ठभूमि में संपूर्ण कुल के सेवा (पूजा) के लिए जो दैविक आचरण करता है, उसे कुलाचारी कहते हैं।

कुलाचारी (कुलयोगी) होते हुए जो, इस बात का वे अनुभव (experience) कर लेते हैं कि वैसे कुल सेवा के द्वारा वे कुल का धारण करते हैं, तो वैसा कुल अनुभवी को कुल धर्मी कहते हैं।

इस प्रकार कुल धर्म के कोल, तापयुक्त प्रकाश एवं ताप रहित प्रकाश के सम्पूर्ण कुल (वृहद् ब्रह्माण्ड) का कुल पुत्र (क्षुद्र ब्रह्माण्ड) होता है। ब्रह्माण्ड का बौना होता है। जिनके शरीर में वृहद् ब्रह्माण्ड के सभी कुछ निहित है।

(यहीं श्री रामेश्वर बिरुवा, बी० एफ० एस०, साकिन लगड़ा के सवालों का जवाब पूर्ण होता है)।

इस प्रकार कुल धर्म के कोल, तापयुक्त प्रकाश एवं तापरहित प्रकाश के सम्पूर्ण कुल (वृहद् ब्रह्माण्ड) का कुल पुत्र (क्षुद्र ब्रह्माण्ड) होता है। ब्रह्माण्ड का बौना अवतारी होता है। जिनके शरीर में वृहद् ब्रह्माण्ड के सभी कुछ विद्यमान है। और ताप रहित प्रकाश (सूक्ष्म) से तापयुक्त प्रकाश (स्थूल) में आकर (जन्म लेकर), मियाद भर जीवित रहकर, शारीरिक मृत्यु के पश्चात् अंश प्रकाश (सूक्ष्म) रूप में ही ताप रहित प्रकाश में वे वापस लौटते है। ताप रहित प्रकाश में ही घुल मिलकर विलीन हो जाते हैं।

ऐसी कुल चक्र में ही वे आते हैं, जीते हैं और जाते है। कभी खोते नहीं हैं। यही उनका जगत (movement) है। कुल जगत है। इसी से वे कोल कहे जाते हैं। इन्हें कुल जगत का कोल कहना उचित है।

सरना आदिवासियों के वार्षिक त्योहारों में गाँव का दियुरी (पाहन) इसी संपूर्ण कुल को देशाउली (जैर—सरना—grove of Salwood mini Kailash) में आह्वान (Invoke) करते हैं और उन्हें पूजा के पवित्र अर्पणों से खुश करते हैं।

पाहन के पूजा के बाद परिवार के कर्त्ता एवं कर्तृ अपने पवित्र रह-कर, अपने पवित्र रसोई कोठरी में, निज कुल के पित्तरों से आरम्भ कर, दैविक कुल तक के देवों को अपने पवित्र रसोई में आह्वान कर पूजा करते हैं। पवित्र भोजन पानी के अर्पणों से उन्हें खुश (संतुष्ट) करते हैं।

उसके बाद उस रसोई पूजा का क्रम कुलीन गृहिणी के द्वारा पवित्र रसोई कोठरी में तैयार भोजन का प्रति सुबह प्रतिशाम घर के सदस्यों को परोसने के पहले पित्तर देवों को अर्पण करने का क्रम जारी रखा जाता है।

फिर गृह कर्त्ता एवं परिवार के प्रत्येक सयाना सदस्य के द्वारा भी खाने के पहले ही पित्तर देवों को पत्ता में थोड़ा देकर अर्पण करते रहने का क्रम जिंदगी भर जारी रखा जाता है।

यही उसी प्रकार प्रथम गृहणी के द्वारा आदिंग (Kitchen) में और फिर द्वितीय में कर्त्ता के द्वारा बाहर में भी पित्तर देवों को अर्पण किए जाते रहने के कारण ही, और अर्पण के बाद ही अपने भोजन सेवन करने के कारण ही कोलों की संस्कृति को आदिंग संस्कृति (kitchen culture) कहते हैं।

आदिंग संस्कृति होने के कारण कोल हर समय जो कुछ भी खाते हैं, प्रसाद (देवों का जूठा) ही खाते हैं। और इस प्रकार उनका शरीर सहित आत्मा हर समय पवित्र रहते हैं।

अब, हे, कोलों क्या आप दावे के साथ यह नही कह सकते हैं कि अपनी कुलाचारी संस्कृति के मुकाबिले संसार में और कोई संस्कृति नही है ?

अतः हे, कोल्हान के कोलों (हे आदिवासियों एवं अन्य सरना आदिवा-सियों)

चाहे अमीरी में, चाहे गरीबी में; चाहे संसारिक प्रतिष्ठा में, चाहे संसा-रिक उपेक्षा में, हर हालत में, कुलाचार में बने रहना ही उत्तम है। कुलाचार से हट जाना ही अधम है।

कोलों का कुल पित्तरों का पूजा अर्पण उनके पवित्र घर के पवित्र रसोई (आदिंग) में ही किया जाता है। कब्रगाहों में, तीर्थ स्थानों में, पेशेवारों के पिंड दानों के द्वारा नहीं किया जाता है।

यह उचित ही है। क्योंकि घर के मालिक का सही स्वागत तो घर के अन्दर ही किया जा सकता है, घर के बाहर नहीं किया जा सकता है। घर के बाहर तो बाहरी अजनबी या घर के नौकर का ही स्वागत किया जा सकता है।

एनामेन्ते देला हे, कोल्हान रेन कोल होन को :—

गोमके वोंगा वोंगा इचिन वुगोना चि,
दासी वोंगा वोंगा इचिन वुगिन
कोले रामो तिकिंग कुली ताना ।।

आदिंग चुल्हा वोंगा इचिन वुगोंना चि,
लाजि चुल्ह वोंगा इचिन वुगोन
कोले रामो तिकिंग कुली तान ।।

इदि एड़ा वोंगा इचिन वुगोना चि,
तेला तिपिल वोंगा इचिन वुगीन
कोले रामो तिकिंग कुली ताना ।।

मुनुएते मुनु एतो वुगीना चि,
नामाएते नाया एतो वुगोन
कोले रामो तिकिंग कुली ताना ।।

कोल्हान दिसुमेरेन होने को लागिड
तारालेते ताराल होरा उरुमे लागिड्
नावेन लेकन बावु गेकिंग कूली तान ।।

वह पुत्र ही क्या पुत्र है जो अपने हाथों अपने घर में, अपने पितरों को भोग अर्पण नही कर सकता है ?

शायद अन्य आचारियों को आदिंग नहीं होने के कारण ही वैसा करना पड़ता है।

Note : Ading is the internal rather the hinder part of Adibasi houses, in which no out siders are allowed to enter and out siders even though they may be the government servants should not enter without first giving the cost of purification to the house holder.

निर्दोष अराधना

आप कुलाचार एवं एकाचार का मिलान कर देखें। (कुल=Total आचार=conduct)

अतः कुलाचार का अर्थ Total conduct for the Total Divinity होता है।

पर स्वार्थ वश, या अपनी भिन्नता प्रदर्शित करने वश, जिस किसी एक देव का, जिस किसी एक अवतारी, पैगम्बर या ईश्वर पुत्र या भगवान का, एक समय में, एक गिरोह के, द्वारा अराधना (worship) करने के आचार को एकाचार (A conduct for One out of the Total Divinity) कहा जा सकता है।

इसके विपरीत स्वार्थहीन सेवा भावना से अपने संबंधित पित्तरों से आरंभ कर ईष्टदेवों, अधिष्ठात्री देवों, एवं परमदेव तक के, तापयुक्त प्रकाश से ताप रहित प्रकाश तक के, पूरे कुल के देवों को अपने पवित्र रसोई के पवित्र भोजन पानी का भोग अर्पण करते हुए, हरेक समय, अराधना करना ही कुलाचार है।

इस प्रकार कुलाचार में अपने जन्म के सिलसिले में पित्तरों से सृष्टि कर्त्ता परमदेव तक कोई छूटते नहीं हैं। इस कारण, इस (कुलाचारी) अराधना के द्वारा किसी पित्तर, किसी देव, किसी अवतारी, पैगम्बर, ईश्वर-पुत्र या किसी भगवान के छूट जाने के कारण, नाराज होने का गुंजाइश नहीं है। और अपना अराधना दोष मुक्त (Faultless) अराधना हो जाता है।

पर सृष्टि के अन्य सभी का, याने अपने कुल से दैविक कुल तक के सभी का, परवाह किए बिना, केवल एक देव का, केवल एक अवतारी, पैगम्बर, ईश्वर-पुत्र एवं भगवान का अराधना करना तो दोषयुक्त (faulty) अराधना हो जाता है। दूसरे तो क्या—ऐसे एकाचारी अराधना से तो खुद अपने पित्तर ही छूट जाते हैं।

यह ध्यान में रखने की बात है कि अपने पित्तरों का नाराज हो जाना, या किसी एक देव का नाराज हो जाना, पूरे अराधना का विफल हो जाना है। और सारा प्रयास, सारा खर्च बेकार हो जाना है। क्योंकि दूसरे देव द्वेष में, गुप्त रूप से, अराधना के सफलता के बाधक बन जाते हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि कुलाचारी दोष मुक्त अराधक है और एकाचारी दोषयुक्त अराधक है। और इसी कारण कुलाचारी के पूजा के फल को तत्काल देखा जा सकता है। और एकाचारी के पूजा के फल को कभी नहीं देखा जा सकता है।

अब आप इस स्थिति का ध्यान करें, और मन में विचार करें, कि क्या दोष युक्त अराधना करना अपने ही त्राण (protection) के लिए एवं अपने ही परिवार के त्राण के लिए उपयुक्त है ?

अगर नहीं तो, और आगे यह भी ध्यान करें कि एकाचारी (संताचारी) के मुकाबिले क्या कुलाचारी उत्तम नहीं है ?

मैं कहता हूँ कि एकाचारी जब एक के दैविक ताकत का गुमान कर सकता है, तो, कुलाचारी तो पूरे दैविक कुल के ताकत का ही गुमान कर सकता है।

———

प्रस्तावना

ओम, जय त्रयम्बकी, जय त्रयम्बकी, ओम।
हे मां ! मैंने तेरे शरीर का रस पीया।
हे माँ ! मैंने तेरे धरती का रस पीया॥
पर चिंता खासकर मुझे यह सताया।
कहीं बेकार तो तेरा रस नही पीया ?? (१) ??
तेरे कुल का कुलाचार यहाँ मैं लाया।
और लोगों को जी भर कर उसे पढ़ाया॥
ऐसे में हे माँ ! क्या किसी ने यह सुनाया ?
श्री रामो ने बेकार ही जिंदगी गंवाया ?? (२) ??

....

जब तक नाबालिग था,
तब तक किसी ने कह दिया तो मान लिया। १।
जब तक पढ़ रहा था,
तब तक किसी ने पढ़ा दिया तो मान लिया। २।
साधना की जिंदगी में आया,
तब पाया की असलीयत कुछ और है। ३।
कहीं गई, पढ़ाई गई,
बातों के आगे तो सच्चाई कुछ और है।४।
अनुभव किया वह आनन्द,
जो तेरे आलिंगन से कभी मुझे मिला। ५।
लिपिबद्ध किया ज्ञान सानन्द,
ठीक वैसा जैसा मुझको तुझसे मिला। ६।

ध्यातव्य—रस=दूध। रस=अन्न एवं फल।
माँ=अपनी माँ, धरती माँ और आसमान की दैविक माँ
बेकार=दैव के अनुभव से रहित जिंदगी बेकार है।
साधना की जिंदगी=सयाना होने के बाद, सारी जिंदगी ही साधना की जिंदगी है।

———

जय त्रयम्बकी [जय नागे एरा-मां गे]

त्रयम्बकी काल है, समय है, मृत्यु है। त्रयम्बकी से बड़ा कोई नहीं है। सारे देवी देवताएँ नही हैं। अवतारी पैगम्बर ईश्वर पूत्र एवं भगवान नहीं है। बाँकी उनके उपासकों एवं स्तूति कर्ताओं का तो पूछना ही क्या है।

क्योंकि त्रयम्बकी, अपनी एक शक्ति (Divine power), मृत्यु शक्ति के द्वारा, आदमी के शरीरों का मृत्यु तो क्या, आदमी शरीरों के आत्माओं का भी मृत्यु कराती है। समय आने पर, अपने में ही विलीन (mingle) कर मृत्यु कराती है। यहाँ तक कि त्रयम्बकी की शक्ति के बिना शिव भी तो शव (corpse) हो जाते हैं।

चाहे पूरब या पश्चिम के, चाहे उत्तर या दक्षिन के, सभी धर्मों के लोग तो काल चक्र (समय चक्र-मृत्यु चक्र) में लिपटते हुए, मृत्यु के कगार में ही पहुंचते जाते हैं।

क्योंकि त्रयम्बकी सभी के जन्म, जीवन एवं मृत्यु शक्तियों की माँ (श्रोत) है। इस कारण काल (त्रयम्बकी) सभी के जन्म कर्तृ पालन कर्तृ एवं मारण कर्तृ है। यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश के भी जन्म दातृ पालन कर्तृ एवं मारण कर्तृ हैं। इन तीनों की माँ होने के कारण से ही वे त्रयम्बकी है। इसी त्रयम्बकी का नाम ही GOD है। क्योंकि वह

Generator—जन्मदातृ है। Operator-पालन कर्तृ है। एवं Destructor-मारण कर्तृ है। सृष्टि के शाश्वत नियम (Eternal Law) जन्म (birth) पालन (existence) एवं मारण (dissolution) शक्तियों के दातृ (माँ) होने के कारण ही त्रयम्बकी है।

अतः यह कहा जा सकता है कि काल महाशक्तिमान है। सर्वशक्तिमान है। इनसे बड़ा कोई नहीं है। भला-मृत्यु (काल) से बड़ा भी क्या कोई हो सकते है ?.....नहीं।

इस कारण किसी को भी न तो जात का, न कौम का न धर्म का, और नहीं धन एवं जन का घमण्ड करना चाहिए। क्योंकि इन सभी के साथ का

मोह माया का संबंध को तो अत्यंत दुःख के साथ काल (मृत्यु) एक पल में ही तोड़ देती है।

इसके विपरीत मन ही मन, केवल उसी आदमी को घमण्ड करना चाहिए, उसी को निर्भय हो जाना चाहिए, जिनको मंत्र जापके साधना के फल स्वरुप काल (त्रयम्बकी) के स्पर्श का अनुभव हुआ है। उनके दर्शन का अनुभव हुआ है। और उनके आलिंगन का अनुभव हुआ है।

यही कारण है, कि होशियार संत लोग, केवल मृत्यू (काल) का ही स्तुति करते हैं। भक्ति करते हैं। अन्यों का नहीं। और वीर भाव के वीरता के साथ, काल के स्पर्श, काल के दर्शन, एवं काल के आलिंगन के अनुभव का असीम आनन्द (Bliss) प्राप्त कर मौन हो जाते हैं। और सर्व साधारणों के द्वारा मौनी बाबा कहलाते है।

लेकिन कुलाचारी तो काल के संपूर्ण दैविक सत्ता के ही पूजारी हैं। क्योंकि वे इस बात को समझते हैं, कि वे काल के ही जन्में अंश काल पुत्र हैं। काल की ही कृपा से अंश कालों के अपने सिलसिले के ही पुत्र हैं। इस कारण निज कुल के सभी अंश काल पित्तरों एवं देव कुल के सभी अंश काल देवों का, वे एक साथ पूजा करते हैं। उन्हे पवित्र भोग अर्पण करते हैं। और जिंदगी भर इसी प्रकार पूजा अर्पण के साथ अपने सिलसिले के संपूर्ण कुल का सेवा करते हुए जिंदगी के अंत में, (अपना श्रोत) काल में ही विलीन होने के यात्रा में आगे बढ़ते हुए, पित्तर अंश कालों के कतार में ही शामिल हो जाते हैं।

अंत में अपने ही कुल के ईश्वरी, एवं सभी अन्य कुलों के इश्वरी (कुलेश्वरी—दैविक माँ—पूर्ण काल) में ही विलीन होकर, परिशुद्ध अवस्था से समय चक्र में पुनः अपने ही नैसर्गिक कुल में जन्म लेने के लिए, काल की ही कृपा से अंश कालों के द्वारा अवतरित होते हैं। और यह क्रम अपने कुल के अनगिनत जन्म-जन्मोतरों के कुल चक्र में जारी रहता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि कुलाचारी, काल चक्री हैं। और जो काल चक्री हैं, उनको मृत्यु का दुःख कहाँ ?

उनके लिए तो काल (नागे एरा—सामोम एरा) माँ, दैविक माँ है। दैविक माँ के गोदी पर से नैसर्गिक माँ के गोदी पर और तब फिर धरती माँ की गोदी पर और पुनः धरती माँ की गोदी पर से दैविक माँ (काल) की ही गोदी पर।

कोल पुत्र का तो इसी प्रकार ही निज कुल के अनगिनत जन्म-जन्मोत्तरों में माँ ही माँ के गोदियों का ही चक्र है। वे तो जीते मरते माँ ही माँ की गोदी पर हैं।

यही कारण है कि कुलाचारी हो आदिवासियों का वर्ष का पहला पर्व "माँगे" (माँ-गे—It is mother only and no other) है। और सबके श्रोत माँ (काल—दैविक माँ—नागे एरा) की निःस्वार्थ सेवा की पूजा होती है। उनके सम्पूर्ण कुल की पूजा होती है।

अन्दाज कीजिए कि वर्त्तमान पढ़े-लिखे, पर कमजोर दिमाग वाले, आदिवासी पुत्रों के मुकाबिले अनपढ़ पूरखों के कितने मजबूत दिमाग थे, और उसके मुताबिक अन्दाज कीजिए कि उनके कुल सिद्धान्त (Philosophy of own genealogy) कितने विशाल, कितनी गहरी, कितनी ऊँची और कितने उत्तम थे !

इसी कारण ही कोल रामो, आदिवासियों से कुलाचारी होने का ही आग्रह करते हैं।

यही कारण है कि रामो ने विद्यालयों की ऊँची से ऊंची शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद भी अपने को कोल आदिवासी अनपढ़ों (दैविक पंडितों) के साथ शामिल करना ही उचित समझा है। अतः कहा जा सकता है कि रामो पढ़ा लिखा अनपढ़ है। पर सही कुलाचारी है।

———

मृत्यु-भक्ति

जब हिन्दू बनने के बाद
मुसलमान बनने के बाद
क्रिस्तान बनने के बाद
होता मृत्यु दुःखदाई है।

जब अवतारी के भक्ति के बाद,
पैगम्बर के भक्ति के बाद,
ईश्वर पुत्र के भक्ति के बाद,
होता मृत्यु दुःखदाई है।

जब सब पूजा करने के बाद,
सब प्रार्थना करने के बाद,
और खूब पढ़ने के बाद
होता मृत्यु दुःखदाई है।

तो क्यों नहीं, करके सबका बाद,
रहे मृत्यु भक्ति हममे आबाद,
जिससे कि हमारी जिंदगी के बाद,
बन जाए मृत्यु सदा सुखदाई है।

..... — — ... .

When Death spares none.
Not even the Incarnation.
Why not worship Death
For happy mingling in Death.
The Death is Kaal
The Controller of All
The sqeck kaal is in every-body
The cause of creation of every body
She was in ancestor's body
She is now in son's body
So she is in body after body
Of the genealogy of every body
So devotion to Kaal is Kul-dharma
The Supreme Dharma of all Dharma.

Note—Kul = genealogy.

मृत्यु

इतना तक में, धार्मिक, आध्यात्मिक एवं तत्व ज्ञान संबंधी, बहुत अधिक बातें समझ में आ गई होगी। ऐसे में, अब इस बात को समझने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि हम आदमी रूप में केवल एक अंश हैं। मात्र एक क्षुद्र हैं। मात्र एक बौना हैं।

ईश्वर, God, अल्हा नाम के रूपों के आगे के रूप; प्रकाश रूप-परमेश्वर Supreme, सींगबोंगा के अंश आत्मा है।

और आदमी रूप में, चाहे कोई कुछ भी हों, चाहे करोड़ पति हों, चाहे झोपड़ पति हों; चाहे राष्ट्रपति हों, चाहे अपना गृह पति हों; चाहे लाखपति हों, चाहे खाकपति हों, चाहे मंत्री हों; हमारा आपका मूल्य-केवल एक आत्मा का है। आपका हमारा मूल्य—केवल एक आत्मा का है।

इसी कारण ही, समाजिक दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से, छोटे स्तर के, छोटे तपके के, शरीर के दैविक रूप से विकसित एक आत्मा—ऊँचे से ऊँचे स्तर के, या ऊँचे से ऊँचे तपके के, दैविक रूप से अविकसित एक आत्मा का शारीरिक मृत्यु करा सकता है। याने दैविक शक्ति युक्त एक शरीर का आत्मा, दैविक शक्ति विहीन दूसरे शरीर के आत्मा को शरीर से निकाल कर शरीर का असमय मृत्यु करा सकता है। इसके अलावे नीचे से नीचे स्तर के बहुत से उत्पीड़ित शरीरों के आत्माओं के आह भी, ऊंचे से ऊँचे स्तर के उत्पीड़क शरीर के आत्मा का शारीरिक मृत्यु करा सकता है। समय के पहले करा सकता है।

इसी बात का ही तो डर हर किसी को होना चाहिए। और वैसा ही आचार को अपनाना चाहिए, जिस आचार के द्वारा हम दैविक शक्ति से युक्त (Coupled with Divine power) हो सकें। जिससे कि हम सुखदाई मृत्यु के लायक हो सकें। और नही तो हृदय गति रूक जाने का मृत्यु तो सामने ही है।

अतः आप चाहे ऊँचे हों, चाहे नीचे हों, समय के रहते, अपने को टटोलिए और अपने को सुधारने का, कुलाचार के रास्ते अपने को बिलकुल सुधारने का कोशिश कीजिए।

फिर इसके अलावे, चाहे हमे पता चलता हो, या नहीं चलता हो,

समय के चक्र में (In the wheel of the Time) हम मृत्यु की ओर ही अग्रसर होते जाते हैं।

कोई बच्चा जन्मता है। जन्माने वाले माता-पिता या अन्य देखने वाले समझते हैं, कि बच्चा बढ़ते ही जा रहा है। जवान होते ही जा रहा है। लेकिन सही में कहा जाय, तो वह तो मृत्यु की ओर ही अग्रसर होते जा रहा है। वे इसके अलावे और कुछ नहीं होते जा रहे हैं। और इसी तरह ही जात कौम एवं धर्म के भेद भाव के बिना ही, हरेक को मृत्यु की ओर अग्रसर होते जाना है। बहुत-बहुत बहादूरी के साथ (with utmost bravity) मृत्यु के निकट ही निकट अग्रसर होते जाना है।

तो क्यों नहीं, अपने ही अग्रजों, पूर्वजों (Ancestors) की हम पूजा करें, सेवा करें, जिन्होंने बहादूरी के साथ, वीरता के साथ मृत्यु का सामना किया है। मुकाबला किया है। और वीरता के साथ ही मृत्यु के निकट भी अग्रसर होते जा रहे हैं। जिससे कि वे इस लम्बी स्वर्गिक यात्रा (Heavenly pilgrimage) में वे भूखे प्यासे नहीं रहें।

पलामू जिला के चेरो, खेरवार इत्यादि आदिवासियों एवं भुइया हरिजनों के वार्षिक वीर पूजा के परम्परा को इसी संदर्भ में अच्छी तरह समझा जा सकता है।

माता-पिता मृत्यु के निकट बहादूरी के साथ पहले पहुंचते हैं, उनके पीछे ही पीछे, उनके ही पुत्र-पुत्री भी बहादूरी के साथ मृत्यु के निकट पहुंचते हैं।

इसके अलावे भी क्या संसार में कुछ होते हैं?.....

नहीं। तो चेरो वीर पुत्रों एवं खेरवार वीर पुत्रों के द्वारा अपने वीर पित्तरों का वीर पूजा कितना तर्क संगत है? कितना उपयुक्त है? सोचने की बात है।

तो क्या—मृत्यु में भी कोई अन्तर होते हैं? ....हाँ।

जो केवल मरते हैं, वे केवल मरते हैं। उनका जिन्दगी में या जिंदगी के बाद में कुछ भी मूल्य नहीं है। मूल्यहीन मरने वाले तो कितना मरे हैं, जिसका कोई गिनती नहीं है।

किन्तु मरने वाले के पीछे, मरने वाले के निजी पुत्र अगर कोई पुजारी

हो तो मरने वाले बिना मूल्य के नहीं मरते हैं। जैसे—जन्माने वाले माता-पिता के पीछे अगर पुत्र पुजारी हो, वह पुजारीन हो तो माता-पिता की मृत्यु बिना मूल्य का मृत्यु नहीं होता है और इस प्रकार माता-पिता की मृत्यु भी बिना गिनती की मृत्यु नहीं होती है।

कुलाचारियों की मृत्यु बिना मूल्य की मृत्यु नहीं होती है। बिना गिनती की मृत्यु नहीं होती है। क्योंकि कुलाचार पद्धति में, पूर्वज पित्तरों का पुत्र के द्वारा, जिंदगी भर पूजा अर्पण के साथ सेवा करते रहने का रिवाज (custom) है। पुत्र के द्वारा पित्तरों को पवित्र भोजन पानी के अर्पण के द्वारा सदा संतुष्ट रखने का रिवाज है। अतः उनकी बिना मूल्य की, बिना गिनती की, मृत्यु नहीं होती है।

संसार में एक तरफ बिना मूल्य के, बिना गिनती के मृत्यु है। याने पशु के जैसा मृत्यु है। और दूसरी तरफ मूल्य वाली, गिनती वाली मृत्यु है। आपही विचार कर तय करें कि आपको संसार में कौन सा आचार का पालन करना चाहिए?

एक तरफ अविकसित आत्मा की दैविक शक्ति विहीन एवं कुल विहीन सिठा (Powerless) जिंदगी है। और दूसरी तरफ विकसित आत्मा की दैविक शक्तियों से युक्त कुलीन, निष्ठा (Powerful) जिंदगी है। आपही विचार कर तय करें कि आपकी कौन सी जिंदगी होनी चाहिए?

जहाँ तक मेरा अपना सलाह है, कि अपनी जिंदगी हमेशा ही दैविक शक्तियों से शक्तिमान जिंदगी ही होनी चाहिए।

....

अभी चाहे जिस धर्म के शरण में भी आप हों। मृत्यु तो वहाँ भी आपको ग्रासते हैं। पर चिंता तो केवल इसी बात की ही है, कि मृत्यु हो तो हो, सुखदाई मृत्यु ही हो। अगर नहीं, तो यही कहना है, कि वे धर्म ही क्या धर्म है, जो दुखदाई मृत्यु को रोकने के सक्षम नहीं है। तो वैसे धर्म के सीमा के अन्दर बने रहने से ही क्या फायदा है? वैसे धर्म है तो केवल स्वर्ग Heaven और जन्नत के झूठे लालच कराने के धर्म हैं।

वैसे धर्म तो केवल नरक, Hell और जहनुम के झूठे भय, कराने के धर्म हैं।

मैं तो देखता हूँ और आप भी देखते ही होंगे, जिनको जो कुछ नतीजा कर्म के मुताबिक भुगतना होता है, मृत्यु के पहले ही भुगत कर मरते हैं। मृत्यु के बाद होने वाली घटनाओं का कौन पता है ? किनको पता है ?

केवल कुलयोगी को ही पता हो सकता है। अन्यों को तो नहीं।

———

उपाय

तब कौन सा उपाय किया जाए कि मृत्यु सदा सुखदाई हो ?

मैं देखता हूँ कि जिस व्यक्ति को मृत्यु का स्मरण होता है, वे सब प्रलोभनों को त्याग कर सब भ्रमों को छोड़कर, योगी हो, केवल मृत्यु (काल) का ही भक्ति करते हैं। और भक्ति करते हुए आत्मा सहित शरीर को भी अमर कर लेते हैं। तपस्वी ऋषियों एवं मुनियों ने अतीतों मे अपने को अमर कर लिया है। अभी वर्त्तमान में भी, बनारस के आनन्द मयी माँ एवं बनारस के निकट के, देवराहा बाबा ने अपने को अमर कर लिया है।

ऐसे में मेरे समझ से वर्तमान के भिन्न धर्मों के सारे धार्मिक संकीर्णताओं को छोड़ कर, और सारे बहकावों को छोड़कर, केवल अपने विवेक पर भरोसा कर; क्यों नहीं—केवल मृत्यु से ही दोस्ती की जाए ? क्यों नहीं—केवल मृत्यु (काल) की ही भक्ति की जाए ?

और इस प्रकार क्यों नही अमरत्व या प्रभूत्व को प्राप्त किया जाए ? क्यों नहीं——सुखदायक मृत्यु को प्राप्त किया जाए ?

हरेक शरीर की आत्मा, अपने शारीरिक जिंदगी में जिस सबसे बड़ी घटना का बहादूरी से सामना करता है, वह केवल मृत्यु (death) का ही घटना है। शरीर को त्यागने के पश्चात फिर इसके आगे जीव के रूप में, जीव के जीवन में, वही आत्मा जिस बड़ी घटना का बहादूरी के साथ सामना करता है, वह आत्मिक मृत्यु की घटना का ही सामना करता है। जिस अंतिम मृत्यु के

बाद, वह आत्मा पूर्ण रुप से काल (मृत्यु) में ही विलीन हो जाता है। फिर तो वह काल ही हो जाता है, उसका कभी पता ही नहीं हो सकता है।

कोई मृत्यु से चाहे अमरत्व को प्राप्त होते हों, चाहे वीरत्व को प्राप्त हों, या चाहे पुनर्जन्म को प्राप्त होते हों, उनके संबध की जानकारी, उनके हरेक स्थिति की जानकारी, पिता के मामले में उनके पुत्र को एवं उनके पत्नि को होनी चाहिए और सन्यासी के मामले में उनके चेला को होनी चाहिए।

लेकिन शायद ऐसी जानकारी तो कोई अन्य आचार के द्वारा नहीं, केवल कुलाचार के द्वारा ही संभव है।

———

खुशी

इस दुनियाँ में, इस सृष्टि में सबसे खुशी की बात यही है, कि मृत्यु (death) है, जो कभी अन्याय नहीं करते हैं।

आदमी अपने इन्द्रियों का प्रयोग करते हुए चाहे जो भी अन्याय कर ले। पर अन्याय का न्याय तो मृत्यु के द्वारा होना ही है।

अतीत (Past) के कितने ही राजाओं ने, कितने ही प्रजाओं ने, मृत्यु के न्याय को देखा और खुद भी उसे पाया। और भविष्य में भी कितने ही लोग मृत्यु के न्याय से होकर गुजरेगें।

शारीरिक बल, धन संचय बल, जन समुदाय बल, पद स्थापन बल के कारण आदमियों का अपने जिंदगी में, भले ही उच्च या नीच स्तरें क्यों न हो जाएँ। पर मृत्यु तो सभी को एक ही स्तर—मृत्यु के स्तर—में ही ले जाते हैं। वे शून्य से ही आए थे और फिर मृत्यु के बाद, शून्य में ही जाएँगे। यहाँ पर उनका कोई अंतर नहीं है।

मृत्यु इसके बाद, आगे और भी न्याय करते हैं वे पुनर्जन्म के प्रक्रिया द्वारा पूर्व के कर्मों के मुताबिक पूर्व के स्तरों के अन्तरों का समाधान करते है। बहुत धनी परिवार वालों को बहुत गरीब में, यहाँ तक कि पशु पक्षियों में, और बहुत गरीब परिवार वालों को बहुत धनी परिवार में पुनर्जन्म कराकर संसार में समता का न्याय स्थापित करते हैं।

किसी का दुःखदायक मृत्यु कराते हैं, किसी का सुखदायक मृत्यु कराते हैं। इसमें विवेकी याने मृत्यु (काल) का ही भक्ति करते हुए, सुकर्म करने वालों का अच्छा सुखदायक मृत्यु कराते हैं और दुष्कर्म करने वालों का बुरा दुःखदायक मृत्यु कराते हैं।

जो कुछ भी हो, लेकिन तब मृत्यु से त्राण (Protection) किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं ?

———

त्राण (Protection)

हे, महाशक्तिमान। हे, महा काल।

त्राण से अवसर लोग, अपने जिंदगी में, केवल अपने शरीर के त्राण की ही बात सोचते हैं। यह भी ठीक है। लेकिन यह तो केवल शरीर के मियाद (जिंदगी) तक के लिए ही ठीक है। पर वे अपने शरीर में स्थित जीव के त्राण की बात बिल्कुल नहीं सोचते हैं।

केवल शरीर के ही त्राण की बात सोचना—यह क्षुद्र ख्याल है। और गलत है।

हे, महाशक्तिमान तेरी कृपा से शरीर का त्राण तो मियाद भर के लिए होता ही है। किन्तु समय पर आने वाले, शारीरिक मृत्यु के आगे, बहुत आगे तो अपने शरीर रहित जीव के त्राण का ही सवाल है।

वे ठीक से सोचें। बहुत ठीक से सोचें। केवल अपने जीव के त्राण का ही सवाल है।

इसी का ही तो मुझको चिंता है। और हरेक समझदार को इसी का ही तो चिंता होना चाहिए।

....

हल (Solution)

इसका हल कैसे हो सकता है ?

किनके द्वारा हो सकता है ?

यह केवल निज संबंधी जीवों के संपर्कों का प्रसार (extention) के द्वारा हो सकता है और यह केवल ईष्ट देवों के संपर्कों का प्रसार के द्वारा ही।

हो सकता है। फिर यह कैसे—जिन्दगी में—मृतक पति जीव का त्राण-पत्नि जीव के पूजा सेवा के द्वारा संभव है। मृतक पत्नि जीव का त्राण—पति जीव के पूजा सेवा के द्वारा संभव है मृतक माता जीवों का त्राण—पुत्र एवं पुत्री जीवों के द्वारा संभव है।

फिर पुत्र जीव का त्राण—दर पूत्र जीव के पूजा सेवा के द्वारा संभव है।

कुल के पित्तर जीवों का त्राण—कुलाचारी पुत्रों के पूजा सेवा के द्वारा संभव है।

क्रमशः अन्य सभी मृतक जीवों का त्राण—इसी तरह के पूजा सेवा के सिलसिले के द्वारा संभव है।

सिंहभूम जिला के खासकर कोलहान क्षेत्र के ही कोलों के द्वारा अपने घर के सदस्य के मृत्यु होने पर दफनाने के बाद, मृतक आत्मा को फिर अपने घर (आदिग kitchen) में वापस बुलाने (ओवाः गोए केया आदेर) की प्रथा (custom) को इसी संदर्भ में अच्छी तरह समझा सकता है।

और ऐसे सेवाओं के एवज में—

पुत्र सहित परिवार का शारीरिक त्राण के साथ आत्मिक त्राण, पित्तर देवों के संरक्षण के द्वारा आसानी से संभव हो जाता है।

यही, ऐसा ही, परस्पर परिवारिक वंसिक एवं कौलिक (genealogical), दैविक पूजा सेवा ही —कुलाचार—है।

अतः हे, महाशक्तिमान।

त्राण की चिंता से मुक्ति दिलाने वाली
कुलाचार बुद्धि का ही मुझमें सदा विकास हो।

—:—

उपासना

उप=निकट। आसना=बैठना या पहुंचना। अतः उपासना का उपयुक्त मतलब निकट पहुँचना होता है। फिर किस मतलब से निकट पहुंचना है ?

प्रथम तो अपने शरीर की और शरीर के आत्मा की रक्षा (त्राण) के लिए और फिर परिवार के सदस्यों के शरीरों के एवं उनके आत्माओं के रक्षा के लिए हमें क्या करना चाहिए ?

हम पुत्रों के जन्म के श्रोत पित्तर आत्माओं (अंश कालों) का उपासना करना चाहिए। और हम सब के कुलों (कुल आत्माओं) के श्रोत महाकाल का ही उपासना करना चाहिए। काल महाकाल की ही कृपा (grace) प्राप्त करने का कोशिश करना चाहिए।

इसके लिए हमें क्या करना चाहिए ?

काल की ही कृपा को प्राप्त करने के लिए हमें दो प्रकार का सत्कर्म (Divine action) करना चाहिए।

परिवार के कर्त्ता के द्वारा पवित्र रहकर—मन ही मन अन्तः करण में उठते बैठते, चलते फिरते, सोते जागते हरेक क्षण सतत (continuous) मंत्र जाप करना चाहिए। मन में मंत्र जाप करते हुए सोना चाहिए। मन में मंत्र जाप करते हुए जागना चाहिए। और इस प्रकार मंत्र के द्वारा अपने तथा अपने परिवार का त्राण करना चाहिए।

मंत्र का अर्थ हैं—मननम त्रायति। याने मन ही मन मनन करते हुए अपना तथा अपने परिवार का त्राण को ही मंत्र कहते हैं।

मनन के साथ ध्यान भी होना चाहिए। ध्यान सही में कहा जाए तो मनन का वाहन (carrier) है। और मन के मनन को इष्ठ देव तक पहुँचाता है। इस प्रकार ध्यान रूपी अदृश्य सूक्ष्म किरण (Invisible rays of meditation) के द्वारा अपने साथ काल के संपर्क को हमेशा बनाए रखना चाहिए।

और इस प्रकार अपने शरीर की शक्ति को बढ़ाकर अपना तथा अपने परिवार का त्राण करना चाहिए। अपने शरीर की शक्ति का प्रसार के द्वारा त्राण (protection by extending the powers of the body) को ही तंत्र कहते है। तान नम त्रामति तंत्र। यह शरीर की शक्ति का प्रसार ध्यान के द्वारा संभव है।

मंत्र शक्ति एवं तंत्र शक्ति के द्वारा अपना ही नहीं अपने परिवार का ही नहीं वरन दूसरों का भी त्राण किया जा सकता है। अपनी अन्तः शक्तियों के प्रसार के द्वारा बिमार आदमी के आत्मा (जीव) को शरीर त्यागने से रोक कर मृत्यु से बचाया जा सकता है।

इसके अलावे शरीर के जीव (आत्मा) को शरीर में ही कायम रखकर शरीर को अधिक दिनों तक जीवित रखने के लिए बाह्य जीवों, खासकर पित्तर जीवों, एवं उनके द्वारा देवों एवं महादेव एवं काल का ही कृपा (grace) प्राप्त किया जा सकता है। और इस प्रकार आदमी को मरने से बचाया जा सकता है। या मंत्र शक्ति से युक्त औषधि का ग्रहण कराकर या जड़ी का धारण कराकर भी आदमी को मृत्यु से त्राण दिलाया जा सकता है।

इन सबके आगे अपने मंत्र एवं तंत्र शक्ति के द्वारा यम के दूतों को मृत्यु शय्या पर पड़े आदमी के निकट पहुँचने से रोककर भी आदमी को मृत्यु से बचाया जा सकता है। या उस आदमी के मृत्यु की तिथि को ही आगे बढ़ाया जा सकता है।

सभी तरह के बिमारियों में सिंहभूम जिला के ही कोलों के द्वारा पूजा करने के रिवाज (custom) को इसी संदर्भ में अच्छी तरह से समझा जा सकता है। या पूजा के बाद ही औषधि सेवन कराने या जड़ी धारन कराने के रिवाज को इसी संदर्भ में अच्छी तरह समझा जा सकता है।

हो, मुंडा, संथाल एवं उरॉवों के इस तरह के पूजा के सारे दैविक प्रयास केवल दैविक कृपा प्राप्त करने के ही प्रयास हैं।

....

यह कैसे किया जा सकता है ?

यह विभिन्न देवों को प्रिय, विभिन्न शब्द संकेतों (मंत्रों) का संबंधित देव को संबोधनार्थ, उच्चारण करके किया जा सकता है। मन एवं ध्यान के द्वारा जब तक संबंधित देव से संपर्क स्थापित नहीं हो जाए, तब तक बारंबार उच्चारण के द्वारा संपर्क स्थापित किया जा सकता है और इस तरह देव की कृपा को प्राप्त किया जा सकता है।

इसी कारण ही कहा जाता है कि विभिन्न देवों के विभिन्न मंत्र हैं। और विभिन्न मंत्रो के विभिन्न देव हैं।

उदाहरणार्थ काल को ही प्रिय उनके संकेतक शब्द (Symbolic word) एक मंत्र "क्रीं" का मन ही मन, काल के ही रूप का ध्यान के साथ सतत उच्चारण के द्वारा काल की ही कृपा प्राप्त की जा सकती है।

या काल का पूर्ण मंत्र "ऊँ" ह्रीं श्रीं, क्रीं, परमेश्वरी कालिके ह्रीं श्रीं क्रीं स्वाहा, ऊँ" का मन ही मन, काल के ही रूप का ध्यान के साथ सतत उच्चारण के द्वारा काल का ही कृपा प्राप्त किया जा सकता है।

या सावित्री (काल) का गायत्री मंत्र "ऊँ भूर्भुव स्वः तत्सवितुः वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि, धियो योनः प्रचोदयात ऊँ" का मन ही मन, सावित्री एवं ब्रह्मा, बिष्णु, महेश के रूपों का ध्यान के साथ, सतत उच्चारण के द्वारा, उन सभी का एक साथ, या किसी एक का कृपा, प्राप्त किया जा सकता है।

इस संबंध में, कोलों के मंत्रों से संबंधित विस्तृत चर्चा अन्यत्र होगी।

पर यह ध्यान में रखने की बात है कि मंत्र किसी एक का नहीं है। मंत्र तो केवल उपयोग कर सकने वाले का है। मंत्र केवल शब्द (Sound) है। जिस किसी भाषा का ही मंत्र हो, मंत्र-देवों के ध्यान को आकर्षित करने के उपयुक्त शब्द है। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार, नाग साँप के ध्यान को आकर्षित करने के शब्द बीन (एक बाजा) के शब्द है। जिसे पौराणिक से भी पौराणिक आदि ऋषियों ने एवं मुनियों ने अनुभव किया था और स्मरण किया था जो अभी हमारे सामने उपयोग के लिए है।

यहाँ यह ध्यान में रखने की बात है, कि सृष्टि के आरम्भ में सृष्टि के निर्माता याने सृजन कर्ता (Creator) सावित्री (काल) ने शब्दों के द्वारा ही ब्रह्माण्ड का नियन्त्रण एवं संचालन किया था। इस ज्ञान को सावित्री की कृपा से ही आदि ऋषियों एवं मुनियों ने अनुभव किया था और तत्संबंधी ज्ञान हासिल कर स्मरण भी किया था, जो युग-युगों से श्रुति एवं स्मृति के जरिए कान-कान से गुजरता हुआ, अभी हमारे उपयोग के लिए ही हमारे सामने है। और मूल रूप में कोलों के पास है।

यही कारण है कि साधक के पवित्र शरीर के मुँह से, उपयुक्त देव के लिए उपयुक्त मंत्र का उच्चारण करने पर देव का ध्यान साधक की ओर आकर्षित हो जाता है।

इसे कोल्हान के कुलाचारी "हो" अच्छी तरह समझते हैं क्योंकि वे आदि के (begining of creation) के कुलाचारी उत्तराधिकारी पुत्र है। और इसी कारण वे बिमारी में या महामारी में, औषधियों के उपयोग के

पहले पूजा ही करते हैं। क्योंकि वे जितना अधिक वेदों का उपासक है, उतना अधिक वैद्य या डाक्टर नहीं है।

इन सबके अलावे इस उपासना के संबंध में यह भी विचारने की बात है कि काल का ही पूर्ण अंश (पूर्ण शक्ति) बृहद् ब्रह्माण्ड में बाह्य शक्ति (external power) के रूप में है। और काल का ही न्यून अंश (अन्तः शक्ति Internal power) शरीर (क्षुद्र ब्रह्माण्ड) में है।

इस कारण काल को ही प्रिय उन शब्द संकेतों (मंत्रों) के द्वारा बाहर एवं भीतर के बाहर के दो कालों (एक पूर्ण काल एवं दूसरे अंश काल) का आपसी सम्पर्क को सदा संभव किया जा सकता है और यह संभव होता ही है।

यह धारणा (concept) हो, संथाल, मुन्डा, उराँव एवं अन्य सरना आदिवासियों में जितना साफ है, जितना सीधा है, उतना दूसरों में नही है।

लेकिन सरना आदिवासियों के देवी (काल) के प्रति एवं उनके दैविक कुल के प्रति अटल विश्वास को लोग मजाक समझते हैं। जो मजाक समझते हैं, वे अन्धकार में हैं। ताप रहित प्रकाश के लिए वे अंधकार में हैं। ऐसे अंधकार में रहने वाले लोगों ने ही बृहद् ब्रह्माण्ड में पवित्रतम "कोल" शब्द का अर्थ सूअर बताया था। या जो अभी कोल शब्द का अर्थ सूअर बताते हैं, उनके शरीर का आत्मा निश्चय ही पूर्व जन्म में सूअर के शरीर का आत्मा था। इसके अलावे तो अन्य कारण नहीं है। और नहीं तो निश्चय ही कोल शब्द का अर्थ समझने के लिए वे "कुलाचार ग्रन्थ" का रचना करते।

साधना

भक्त के द्वारा मंत्र जाप का साधना (exertion) अत्यंत पवित्र एकान्त एवं शान्त वातावरण में किया जा सकता है।

अपने घर में एक कोठरी नियत करें। या अलग से एक कोठरी बनवा लें। जिसमें सबका प्रवेश निषेध हो।

पक्का हो तो पानी से धुलवा कर, और कच्चा हो तो गोबर के पानी से लीप पोत कर, साफ एवं पवित्र कर लें।

उसके अन्दर पानी से धुलाया हुआ एक खाट या एक चौकी, या बिलकुल ही नया खाट या नया चौकी, बिठा दें। और उसके ऊपर, खाट

या चौकी, के पूरे लम्बाई चौड़ाई का एक कुश का चटाई बिछा दें। फिर उसके ऊपर हिरण का चमड़ा या कम्बल बिछा दें। फिर उसके ऊपर तसर का, रेशम का या सूती का चादर बिछा हो। या ऊन का चादर बिछा सकते हैं। पर सभी धुलाया हुआ साफ पवित्र हों। ऐसे कोठरी में, नहाकर, स्वच्छ वस्त्र धारण कर संभोग के दोष के बिना ही वास करें। और उस कोठरी से या उस विस्तर पर कभी संभोग नहीं करें। कोठरी के हवा को अगर वत्ती जलाकर या धूणा, जलाकर पवित्र कर दें। वैसे विस्तर पर बैठे हुए या लेटे हुए मन ही मन सतत मंत्र जाप करें। मंत्र जाप करते हुए उठे। और रोशनी में कुलाचार ग्रन्थ का भी सतत अध्ययन करें कुलाचार ग्रन्थ आपके ध्यान को जागृत करने में, विस्तृत करने में सहायक हो सकते हैं। ताप रहित प्रकाश की ओर जाने में सहायक हो सकते हैं।

सबेरे कोठरी से निकलने के बाद दिन में संसारिक काम अवश्य करें। साधना करने के बहाने आलस नही करें। सृजित (created) के कल्याण के लिए निश्चित रुप से कल्याणकारी पवित्र कार्यों में, उत्पादन के कार्यों में, अपने शरीर का, अपने समय का उपयोग करें।

क्योंकि, आखिर, जिनकी उपासना करते हैं, जिनकी साधना करते हैं। जिनका मंत्र जाप करते हैं, उन्हीं की ही तो सारी सृष्टि है। चींटी से लेकर आदमी तक के शरीरों में उन्हीं का ही तो अंश है। इनके, किसी न किसी रुप में उपयोग के लिए भोज्य पदार्थों के उत्पादन में, अपने शरीर का उपयोग दिन में सदा करना चाहिए।

कहने का मतलब यही है कि सावित्री (काल) को हरेक सूकर्म से खुश करने का ही कोशिश करना चाहिए। ऐसी कोशिश ही सही साधना (exertion) है।

अतः कोठरी के बाहर, चलते फिरते, उठते बैठते, काम करते हुए या वार्तालाप करते हुए, हरेक क्षण अन्तः करण में हरेक क्षण, मंत्र जाप के साथ ध्यान जारी रखें। और अपनी पत्नि को छोड़कर, बाकी बच्ची से लेकर बुढ़ी तक को माँ तुल्य ही देखें। उनके प्रति माँ तुल्य ही भावना भी रखें। यही असली और सबसे बड़ी साधना है। यही सफलता की एक कुंजी है। क्योंकि इसमें भावना की पवित्रता है।

इससे भक्त के भक्ति के जिंदगी का या योगी के योग की जिंदगी का कोई भी क्षण बेकार नही जाता है। और ऐसा कोई भी क्षण नहीं हो सकता है, जिसमें काल के साथ का संपर्क पवित्र भाव के बिना टूटा रहे।

भक्त योगी का मन काल में ही रत है और काल का आकर्षण, काल की कृपा, भक्त योगी में ही रत है।

कितना सुन्दर समन्वय है, सोचने की बात है। ऐसे में दैव के सम्पर्क की सफलता निश्चित है।

....

परन्तु इन सबके बावजूद, पवित्र भोजन पवित्र पानी के सेवन के बिना तो सफलता निश्चित नहीं है। इस कारण रसोई बनाने वाली गृहणी को कुलाचारी मापदंड के मुताबिक अपनी पवित्रता सूनिश्चित (guarantee) करना होगा।

गृहिणी—कभी भी किसी भी हालत में अपने पति को छोड़कर, किसी अन्य से यौन संपर्क नहीं रखें।

चाहे राजा की रानी हो, चाहे साहेब की साहिवा हो, गृहिणी को, पित्तरों, देवों एवं महादेवी (काल) की भोग अर्पण करने के लिए पवित्र भोजन अपने हाथों तैयार करना होगा।

नौकर या दाई के द्वारा तैयार भोजन अर्पण नही किए जा सकते हैं। और अगर अर्पण भी हो तो वह भोजन पितरों एवं देवों को स्वीकार्य नहीं होगा।

इस कारण गृहिणी रसोई (आदिग) के लिए एक अलग कोठरी नियत करें। जिसमें सबका प्रवेश भी निषेध हो। फिर इसके आगे यहाँ तक कि अपनी विवाहित लड़कियों, अपनी सयानी (grown up) लड़कियों का भी प्रवेश निषेध हो।

प्रतिदिन नहाकर स्वच्छ वस्त्र धारण कर रसोई कोठरी में प्रवेश करें। चुल्हा सहित रसोई कोठरी को लीप पोत कर साफ एवं पवित्र करें। रसोई के वर्त्तनों को रसोई कोठरी के बाहर नहीं निकालें। वरन रसोई कोठरी के अन्दर ही साफ करें। अगर बाहर निकाल कर साफ करना चाहें तो किसी के गैर वाने में ही निकालें और साफ कर फिर अन्दर करें। हवा को पवित्र करने के लिए एक काँटी अगरबत्ती को जला दें। या थोड़ा धूणा का धूवाँ कर दें।

इतना समझ लें कि रसोई बनाना ही एक पूजा है। जिसमें अपनी पवित्रता एवं रसोई बनने के स्थल की पवित्रता परमावश्यक है।

रसोई के वर्त्तन मिट्टी के हों। कुम्हार के बने मिट्टी के वर्त्तन ही पवित्र होते हैं। इस कारण भोग अर्पण के योग्य पवित्र भोजन बनाने के लिए जहाँ तक हो सके, मिट्टी के वर्त्तनों का ही उपयोग होना चाहिए।

अगर अधिक खाने वालों के कारण अधिक भोजन मिट्टी के वर्त्तनों मे नहीं पकाया जा सके तो भोग के भोजन, मिट्टी के वर्त्तनों में अलग पकाकर खाने के भोजन, धातु के वर्त्तनों में पकावें। या खाने के भोजन को रसोइ कोठरी के बाहर एक अलग चुल्हा में नौकर या नौकरानी के द्वारा पकवाएँ। पर किसी भी हालत में भोग के लिए पवित्र भोजन गृहिणी को अपने हाथों से मिट्टी के पवित्र वर्त्तनों में पवित्र रसोई कोठरी में ही पकाना चाहिए।

इस प्रकार प्रत्येक गृहिणी को दो चुल्हों, एक रसोई कोठरी के अन्दर का चुल्हा (आदिग चुल्हा) और दूसरा कोठरी के बाहर, का चुल्हा (लाजि चुल्हा) का प्रबंध करना चाहिए।

गृहिणी को सुबह से देर शाम तक रसोई बनाने (रसोई पूजा) का काम समाप्त किए बिना पति का संपर्क कभी नहीं करना चाहिए। अगर संपर्क हो भी जाय तो, फिर नहाकर धुले हुए वस्त्र धारण कर ही रसोई कोठरी में प्रवेश करें।

हे, गृहिणी, ऐसी पवित्रता की हालत में तैयार, साधारण से साधारण पवित्र भोजन, प्रथम पित्तरों को, और उनके साथ ही देवों को, सखुवा के ताजा पत्ता में थोड़ा परोस कर, अपने हाथों से अर्पण करें। कोल्हान की कुलिन गृहिणियों को भोजन अर्पण की विधि सदा से मालूम है। उन्हें इस परंपरागत विधि का सदा अनुशरण करना चाहिए। और कभी नहीं भुलाना चाहिए।

हे, गृहिणी; इस प्रकार अर्पण से बचा हुआ पवित्र भोजन ही अपने बच्चों को और अपने पति को रसोई कोठरी (आदिग) के बाहर परोसना चाहिए। और तब अपने भी खाना चाहिए। और नौकर चाकर को अलग खिलाना चाहिए। और अतिथियों को भी अलग खिलाना चाहिए।

परोसने के बाद रसोई कोठरी से बाहर निकाले हुए भोजन को फिर वापस रसोई कोठरी के अन्दर नहीं ले जाएं। अगर अन्दर ले भी, जाएँ तो रसोई के वर्त्तन में फिर नहीं डाले।

हे, गृहिणी। मासिक (monthly) आरंभ होते के साथ, रसोई कोठरी में प्रवेश बिलकुल बंद करें। मासिक आरंभ होने से मासिक अंत होने के बीच के एक सप्ताह के बाद, नहाने के दिन तक, रसोई कोठरी में प्रवेश नहीं करें। बाहर के चुल्हा में ही भोजन पकावें। या नौकरानी के द्वारा ही भोजन पकवाएँ।

ऐसे समय में अपनी या अपने वंश के अन्य परिवार की अविवाहित लड़की से पवित्रता की हालत में रसोई कोठरी में भोजन पकवाएँ। या नहीं तो पति खूद पवित्रता की हालत में रसोई कोठरी में भोजन पकावें। जिससे कि भोग अर्पण का क्रम जारी रहे।

गृह कर्त्ता एवं गृहिणी को, किसी दूसरे के घर का भोजन या दुकान घर के भोजन का सेवन नहीं करना चाहिए। अगर निमंत्रण पर किसी दूसरे के घर में भोजन करना पड़े या मजबूरी में कभी दुकान वर का भोजन करना पड़े तो घर आने पर नहा कर, धुलाया हुआ वस्त्र धारण कर ही रसोई कोठरी में प्रवेश करें और रसोई का काम करें।

अपनी प्रसव के समय, प्रसव के दिन से तीन दीनों तक रसोई कोठरी में प्रवेश नही करें। इस समय अपनी अविवाहित लड़कियों या पति के वंश की अविवाहित लड़कियों से रसोई कोठरी में रसोई का काम करावें। दूसरे नारी के प्रसव में चाहे वे अपने पति के वंश की ही क्यों न हो तीस दिनों तक नहीं छुवाएँ। एकतीसवाँ दिन नहा धोकर, घर द्वार आँगन का लिपाई पोताई से साफ कराकर, कुलाचारी पूजारी के पूजा से शिशु को भी पवित्र कर, शिशु के साथ ही रसोई कोठरी में प्रवेश करें। और रसोई का काम पुनः आरंभ करें। नवजात शिशु को पवित्र करने की पूजा पित्तरों से परिचय कराने की पूजा है। अतः यह अवश्य होना चाहिए।

घर में ही मृतक की स्थिति में परिवार के सभी कोई एक सप्ताह तक (दाह संस्कार पूर्ण होने तक) अपवित्र हो जाते हैं।

एक सप्ताह के अन्दर समूची सफाई के बाद, मृतक आत्मा को रसोई कोठरी में वापस बुलाने का प्रक्रिया पूरा होने पर, नए मिट्टी के बर्त्तनों में रसोइ कोठरी में पवित्र भोजन बनाने का क्रम फिर चालू रखें।

गाँव के या वंश के किसी दूसरे के मृत्यु की स्थिति में, शामिल होने पर नहाकर धुलाया हुआ वस्त्र धारण कर ही रसोई कोठरी में प्रवेश करें।

प्रसव की स्थिति में, मृत्क की स्थिति में पवित्रता संबंधी कुलाचारी विधि का पूर्ण रूप से अनुशरण करें।

कुल योगियों के लिए, कुल योगिनों के लिए, पवित्रता संबंधी उपरोक्त बातें संक्षिप्त में कही गई है। पूरी जानकारी व्यक्तिगत अनुभवों से एवं आपसी सम्पर्कों से प्राप्त होगी। क्योंकि कुलाचारियों के त्योहारों के लिए पवित्रता संबंधी और भी बहुत से मापदंड हैं।

साधक के लिए असली में कहा जाए तो छूआछूत के खूद अपने ही कारण है। अपनी गृहिणी ही कारण है। दूसरा कारण नहीं है। अपनी पवित्रता को अगर खूद अपने ही कायम नहीं करें तो दूसरे को छोटा जात कहने से ही क्या फायदा होता है।

परंतु जो साधक नहीं हैं, वे उँचे जात के हों या नीचे जात के हों, उनके लिए तो छूआछूत के कोई कारण नही है। अपने भी नही है और अपनी पत्नि भी नही है।

सही में कहा जाए तो देवों को स्वीकार्य्य परम पवित्रता को सूनिश्चित करने के लिए (For complete guarantee of purity) साधक को नदी के बालू के चुआँ से खुद ही पानी लाना चाहिए। प्रतिदिन नए मिट्टी के बर्त्तनों में खूद ही भोजन पकाना चाहिए। और वैसा पवित्र भोजन प्रथम देवों को अर्पण करने के बाद खूद सेवन करना चाहिए। कही भी जाएँ केवल कच्चा सामान ही स्वीकार करें और खूद ही पानी लाकर खूद ही पकाकर खायें। अपनी पत्नी, अपनी बहन तथा अपनी लड़की के हाथों तैयार भोजन तक भी स्वीकार नही करें।

इसके अलावे पवित्रता को कायम करने के अन्य उपाय नहीं है। और नहीं तो केवल फलों का सेवन करें या केवल चना फूलाकर खायें।

इस प्रकार पवित्रता को प्राप्त कुलयोगी के द्वारा ही सही मंत्रोचारण, सही पूजा अर्पण संभव है। अन्य किसी प्रकार किसी द्वारा नहीं।

ध्यातव्य—एक समाज का, एक धर्म का, एक परिवार, केवल खाने के लिए भोजन पकाता है।

दूसरे समाज का, दूसरे धर्म का, दूसरा परिवार पूजा भोग अर्पण के बाद खाने के लिए भोजन पकाता है।

आप ही बताइये कि कौन अच्छा है? कौन प्रसाद है? कौन बुरा है? कौन प्रसाद नहीं है?

Dear Aspirants

I want to make it clear to you that it is your anxiety to contact and experience the supreme, it is never the anxiety of the Supreme to contact you. Because the Supreme has already equipped you with an intellect for rising above up to him.

So, if you want to see and experience the Supreme (Iswar, Alha, God, or by what-ever name you may call) you must have to be very very serious with your intellect.

The proper line of action is exertion (Sadhana), you must have to exert by following strictly the Divine disciplines on the lines of Kulachar.

Colourful ceremonial worships prayers and singing of devotional songs alone are not sufficient.

आदिवासियों का
कुल धर्म

अपने तन का, अपने घर का, अपने गाँव का
अपना धर्म है।
इसका आधार
अपने कुल के प्रति कर्त्तव्य एवं दायित्व का
परंपरागत अपना आचार
कुलाचार है

....

जिनका अपना आचार नही,
उन्हीं का पराया आचार है।
जिनका अपना धर्म नही,
उन्हीं का पराया धर्म भी है।
पराया धर्माचार अपनाना,
आत्म सम्मान का बलि करना है।
इस लोक मे, उस लोक मे,
कुल सम्मान का बलि करना है।

———

ध्यातव्य—सिंहभूम जिले के कोल्हान क्षेत्र के कोलों (हो) का पौराणिक से परंपरागत अपना आचार है। अभी तक शुद्ध रूप में है। यह पुत्र के द्वारा अपने जन्म के सिलसिले के श्रोत, प्रथम कुल पिता (किलि आपु अण्डों मरंग-वोंगा) के सम्पूर्ण कुल के प्रति श्रद्धाभक्ति का अद्वितीय अपना आचार-कुलाचार है।

यह मौलिक से भी मौलिक (Ab-Original) आचार है। सृष्टि के सनातन (eternal) नियमों के सनातन धर्म "कुल धर्म" का आचार है। जो "हो" लोगों के पास अभी तक शुद्ध रूप में मौजूद है।

इसी कारण ही, संसार में अभी तक अपना शुद्ध आचार होने का कोल 'हो' लोग बहुत मजे के साथ गर्व कर सकते हैं। वैसा शायद ही अन्य कर सकते हैं।

Ab original thought.

There can be only one Original Religion in the world, And that is the Religion of Death.

Because the Death controlls the men of all the present Distinct Religions in the world.

So the devotion to Death is the devotion to all the religions, in One. Again the Death is the greatest incident of all the incidents which a soul has to face with utmost bravity in life.

The deaths occur in recurin the genealogy of a family. So there is the recurring rememberance of deceased after deceased in the genealogy by the descendant sons.

The descension of rememberances of departed souls when converted in to worship, with offerings of pure food and pure water daily, under Divine disciplines by son, brings solace to the departed brave Ancestral souls, and they in turn bring Divine Blessings to the family after families, of the descendant sons after sons.

This practice if continued by sons after sons in succession, also brings back the departed ancestral brave souls for re-births as grand sons and grand sons in the own genealogy of families.

So there is completely no chance of un-acquainted souls taking birth as sons and grand sons in the genealogy. And as such the total family genealogy becomes the genealogy of Originaly related brave pure soul as sons, for ever.

Thus it becomes the One purest total Cycle of births and re-births of own acquainted and related brave souls in the family; death after death and birth after birth, which a Kulachari son alone can experience with Bliss.

Such is the Total Culture of Death.
Such is the Total Divine conduct of Death Kulachar.

Such is the Total Religion of Death Kuldharma.

——

आदिवासियों का

परम **कुलाचार** का आधार

परम **पवित्रता** है।

हमेशा का सत्य ही परम पवित्रता है ।

G - - - - O - - - - D

Generator	Operator	Destructor
ब्रह्मा	विष्णु	महेश
(जन्म शक्ति)	(पालन शक्ति)	(मारण शक्ति)

के श्रोत **महाशक्तिमान** का

आकर्षण ही **परम पवित्रता** है।

" Supreme is the Purest of all Pures "

....

फूलों का सुगंध पाकर भौंरे जैसे आकर्षित होते हैं।
पवित्रता का सुगंध पाकर देव वैसे आकर्षित होते हैं।

कालेज रेवेन पाढ़ावो केना
तेम्भे एतोम इकिर केना
दिकु कजि साहेयोव कजिग ओंडोङ्गे केना ।। को ।।
नावेन जुड़िम मिसन कुड़ी
नावेन गतिम दिकु कोड़ा
चिका ते वेन वोपोंङ्गा जागरा तुंञा वेन ।। को ।।

———

Note—Your own purity, is your own property.
Just as your integrity is your own property.

गर्व

बहुत कोई अपने अंगीकृत धर्म का
अक्सर दावा करते हैं।

किन्तु सभी कोई अपने मूलधर्म का
कभी दावा नहीं करते हैं।

बहुत-कोई अपने अंगीकृत संस्कृति का
अक्सर दावा करते हैं।

किन्तु सभी कोई अपने मूल संस्कृति का
कभी दावा नहीं करते हैं।

मूल धर्म कुल धर्म का दावा तो
केवल कोल ही कर सकते हैं।

मूल संस्कृति आदिग संस्कृति का दावा भी
केवल कोल ही कर सकते हैं।

....

तब कोलहान के कोलो ! क्या—वर्त्तमान के चमक दमक के धर्मों को, वर्त्तमान के मिश्रित संस्कृतियों को देखकर, तुम्हें कभी विचलित होना चाहिए ?

कभी नही, कभी नही, कभी नहीं। किसी हालत में भी नहीं। वरन अपने मूल आचार अपने मूल धर्म का ही गर्व करना चाहिए।

बिलकुल तना हुआ, दिमाग से नही जीना चाहिए।
वास्तविकता को तहे दिल से समझना चाहिए।
तदनुसार तर्क संगत आचरण करते हुए ही जीना चाहिए।

——

समर्पण

ओम नमः शिवाए

कुलाचार

मात्र कोलों को समर्पित।
और मात्र कोल वीर पुजारियों को समर्पित।

... ...

मुझे इस बात का अफसोस है।
यह कुलाचार सबका नही है॥
यह तो केवल उन वीरों का है।
शुद्ध कुल का खून जिनका है॥

....

Wherever there is inter-mixture
There is death of Own Culture.
Own Religion becomes defective.
When its culturing is defective.

——

ध्यातव्य :— वीर वही है जो दृढ़ निश्चय के साथ निज कुल की गरिमा मे जीता है।

वीर वही है जिसने एक सुबुद्धि के प्रहार से दसों इन्द्रियों को जीता है।

वीर वही है जो अपने दृढ़ मन से, अपनी धर्म पत्नि को छोड़कर, बाकी बच्ची से लेकर बुढ़ी तक को माँ तुल्य देखता है।

Own Culture :—Self culture, personal culture of own genealogical tradition coming down from time immemorial. mouth to mouth and ear to ear.

बहुत कोई रासन के प्रलोभन में आकर, बहुत कोई नारी के आकर्षण में आकर, और बहुत कोई नौकरी के नाम पर किसी भिन्न (distinct)

धर्म में शामिल हो जाते हैं। और उसे ही, अपना दावा करने लगते हैं। और असली अपने मूल धर्म का निंदा करने लगते हैं।

फिर इसके आगे, उस धर्म के रीति रिवाजों का अनुशरण करते हुए समझने लगते है, कि वही उनका संस्कृति है। और अपने ही सहोदरों (हागा एवं वाला) से नफरत करने लगते हैं।

पर हर हालत में वे धर्म, वे संस्कृति, तो अपनाया हुआ (adopted) धर्म और संस्कृति है।

कोई किसी चीज को अपनाता कब है ?

जब उसके पास वह चीज नहीं है।

अपने पास तो खास अपना,

अपने ही जन्म के श्रोत का **कुलाचार** खास अपना है।

अपने ही संस्कृति का **कुल** धर्म खास अपना है।

और **कुल धर्म** का **कुलनाम** खास अपना है।

तो किसी अन्य, का अपनाने का क्या जरूरत है ?

—:—

जैसे :—नाम—रामो है। कुल नाम—विरूवा है। डिवरू वीर कुल के उत्तराधिकारी वीर पुत्र-दर-पुत्रों का गोत्रीय नाम (किलि नुतुम) है। उसकी गरिमा को कायम रखने का दायित्व वीरूवा परिवारों के वीर पुत्रों का है।

स्व-धर्म [Self-Ism]

बताईये तो इन्सानो।
बताइये तो मोमिनों !!
कहाँ तेरा तन का धर्म है ?
कहाँ तेरा घर का धर्म है ??
जो कुछ है तेरा, मंदिर का धर्म है।
जो कुछ है तेरा, गिरजा का धर्म है।
इससे होता कहाँ तेरा श्राण है ?
इससे होता कहाँ पित्तरों का त्राण है ??
सुनिए रामो का यह बात नर्म है।
जो जानता एक दैविक मर्म है ।।
घर में आपस के पूजा का जो धर्म है।
प्राणों के त्राण का यही एक धर्म है ।।
बात मानिए ऐ, महाशय !
जानता हूँ मैं सबका आशय !!
पराया धर्म से होता नहीं अपना त्राण है।
केवल कुल धर्म से ही होता अपना त्राण है ।।
पराया धर्म जब तुझे स्वर्ग पहुंचा सकते हैं ।।
कुल धर्म तो स्वर्ग को ही घर पर ला सकते हैं ।।
अन्य धर्म जब तुझे मोक्ष दिला सकते हैं।
कुल धर्म तो तुझे कुलमाला में ही पिरो सकते हैं ।।

....

ध्यातव्य :—घर में किसी के बिमारी में केवल वैद्य या डाक्टर का इलाज कराना ही धर्म नही है। -कर्त्तव्य का धर्म नही है। बरन बिमार के प्रति देवों का कृपा प्राप्त करने के लिए पूजा करना या कराना भी धर्म है। कर्त्तव्य का धर्म है।

अपने संबंधी के मृत्यु पर एक भोज कराना ही धर्म नही है। कर्त्तव्य का धर्म नही है। बरन दिवंगत निज संबंधी जीव को पवित्र भोजन पानी का नित्य अर्पण करना ही असली धर्म है। असली कर्तव्य का धर्म है।

ऐसी आपस की सेवा ही निजी धर्म है। कुल में परस्पर के त्राण का ही मूल धर्म है।

धर्म

धर्म, अध्यात्म एवं तत्व ज्ञान संबंधी इतने व्याख्याओं की पृष्ठ भूमि में तब सार तत्व ज्ञान यही होता है, कि हरेक व्यक्ति का एवं हरेक परिवार के सदस्यों का, मुख्य रूप से तीन धर्म होना चाहिए।

प्रथम धर्म—अपने शरीर (तन) का धर्म होना चाहिए।
द्वितीय धर्म—अपने घर (रसोई) का धर्म होना चाहिए।
तृतीय धर्म—समाज (बाहर) का धर्म होना चाहिए।

क्योंकि प्रथम तो अपना शरीर ही मंदिर है। अपने प्रिय देवता (जीव-आत्मा) का अपना शरीर ही मंदिर है। इस शरीर रूपी मंदिर को हमें पवित्र कर्म, पवित्र भोजन, पवित्र पानी के सेवन के द्वारा उतना ही ज्यादा पवित्र रखना चाहिए, जितना ज्यादा पवित्र रखने से अपने शरीर का देवता, शरीर का आत्मा खुश रहे। और अधिक से अधिक दिनों तक अपने शरीर में टिका रहे। और जिससे कि शरीर अधिक से अधिक दिनों तक जीवित बना रहे। इसी लक्ष्य के प्राप्ति का धर्म ही प्रथम धर्म है। तन का धर्म है।

अपनी दैविक लीला (Divire play) के लिए तन के धर्म वाले इस शरीर युक्त देवता (Embodied God) (या देवात्मा) को शरीर रहित वाह्य देवात्माओं एवं देवताओं (body less external gods) से भी सम्पर्क बनाए रखना होता है।

इस कारण द्वितीय धर्म में, इस शरीर के रहने और इस शरीर के लिए भोजन पकाने का घर भी उतना ही ज्यादा पवित्र होना चाहिए, जितना ज्यादा पवित्रता कायम रखने पर, वाह्य देवतागण, शरीर के देवात्मा से मिलने के लिए रात के सुनसान में, आसानी से निः संकोच घर में आ सकें। और फिर वापस जा सकें। फिर उसी तरह पवित्र भोजन पानी का भोग पाने के लिए रसोई में आ सकें और जा सकें। इसी लक्ष्य का प्राप्ति का धर्म ही द्वितीय धर्म है।

शरीर रूपी वैसे पवित्र मंदिर, और घर रूपी वैसे पवित्र मंदिर, के रहते हुए भी, घर के कर्त्ता को एवं कर्त्ता के परिवार को, संसारिक व्यवहारों (Worldly affairs) के लिए, विभिन्न समाज के, विभिन्न समाजिक कामों में शामिल होना पड़ता है। और शामिल होकर, समाजिक, सार्वजनिक धर्म निभाना

होता है। सार्वजनिक स्थानों के समाजिक सार्वजनिक समारोहों में निष्ठा पूर्वक शरीक होना तीसरा धर्म है। और सार्वजनिक भवनों (मंदिर मस्जिद गिरजा इत्यादि भवनों) का धर्म है। यह सार्वजनिक समाजिक भिन्न कर्मों के भिन्न धर्म हैं। लेकिन कोलों के तो समाजिक सार्वजनिक अपने ही परंपरा धर्म है।

लेकिन संसार में बहुत सारे लोग केवल बाहरी पराया भिन्न धर्मों में हैं। भिन्न गिरोहों के भिन्न धर्मों में केवल शामिल हैं। इस प्रकार वे अपने शरीर धर्म और अपने रसोई घर (आदिग) धर्म के बिना ही वे अलग अलग भिन्न धर्मों में हैं।

इससे उन्हे वैयक्तिक या परिवारिक दैविक क्रिया कर्मों (सत्कर्मों) का कुछ भी फल देखने को नही मिलता है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष फल भी देखने को नहीं मिलता है। और शरीर धर्म एवं घर धर्म के अभाव में, समाजिक दैविक क्रिया कर्मों का कुछ भी फल देखने को नहीं मिलता है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष फल भी देखने को नहीं मिलता है। इससे उनका सारा दैविक कारोबार ही अन्दाजी है।

सौभाग्य से कोल आदिवासियों खास कर सिंहभूम जिला के कोलहान क्षेत्र के हो कोल आदिवासियों के पास पौराणिक से भी पौराणिक रीति रिवाजों में तीनों धर्म—शारीरिक वैयक्तिक धर्म, परिवारिक घरेलु धर्म, और समाजिक सरना धर्म, अभी की शुद्ध रुप में मौजूद है।

यही कारण है, कि उनके (कोलों के) पूजा के फल उन्हें (कोलों को) प्रत्यक्ष तत्काल दिखाई देते हैं। जो गैर कोलों को दूर्लभ हैं।

हे, हो, मुंडा, संथाल, उरांव एवं अन्य आदिवासियों! आप इसे मिलान कर देखें और तब रामो को बतावें।

इसी कारण ही यह मेरा स्पष्ट उपदेश होता है, कि कोलों को कभी भी, किसी कीमत पर भी मात्र भिन्नता लाने के मतलब से संचालित केवल समूह के सार्वजनिक धर्मों में शामिल नहीं होना चाहिए।

क्योंकि भिन्न धर्म हर हालत में पराया धर्म है। और उस भिन्न धर्म से संबंधित आचार पराया आचार है।

इसके विपरीत अपने वैयक्तिक शारीरिक धर्म अपने परिवारिक घरेलु धर्म "कुलधर्म" से और इनसे संबंधित आचार "कुलाचार" तो निजी धर्म एवं निजी आचार है।

फिर निजी धर्म "कुलधर्म" से संबंधित समाजिक धर्म सरना धर्म निजी, धर्मों का ही समूह धर्म है। और इनका आचार "कुलाचार" निजी आचार का समूह आचार है।

कुलाचार, कुलधर्म; घर धर्म, घराचार, सरना धर्म, सरनाचार; ये सभी आत्मा—परमात्मा के परम पवित्रता से संबंधित हैं। इस कारण इन में किसी प्रकार का भिन्नता नहीं हो सकता है। इसे आप खूद मिलान कर देखें। हे, कोलों! अतः यह मेरा कहना होता है, कि जिनको उत्तम अपना है उन्हीं को अपना नाज है। जिनको उत्तम पराया है। उत्तम होकर भी पराया तो पराया ही है। पराया को अपना समझकर नाज करना नादानी है। तो अब हमें समझना है कि निजी धर्म क्या है!

अनुभव के धर्म

जीवन यापन के सामान्य समाजिक जिंदगी में किन्हीं का मुंहताज बनकर रहना, जब एक शर्म की बात है। एक सकुचाहट की बात है। तो क्या··· ···· ····

असामान्य, धार्मिक, दैविक जिंदगी में, किन्हीं का, किन्हीं वहेली आदमी का, मुंहताज बनकर रहना बर्दास्त हो सकता है?

मेरे ख्याल से तो नही। कदापि नही। शायद केवल दब्बु आदमी से ही वर्दास्त हो सकता है।

भला कोई, तथाकथित धार्मिक गुरु, धार्मिक ठीकेदार बनने के पहले वे ठीक वैसा ही तो जन्मे थे, जिए थे, जैसा हम सभी जन्मे हैं और अभी जीते हैं।

तो वैसे में अभी विभिन्न धर्मों के तथाकथित गुरु (पं० पा० मौ०) जिस प्रकार अपने दैविक अनुभव (Divine experience) का हामी भर सकते हैं; तो क्या—हम स्वयं के (वैयक्तिक धर्म घरेलू धर्म के) प्रयास से, उनसे भी अधिक प्राप्त, दैविक अनुभवों का, हम उनसे भी अधिक हामी नहीं भर सकते हैं?···— ···अवश्य।

इन तथाकथित गुरुओं के आगे, बहुत आगे, उनसे दूर बहुत दूर, अतीत में, इनके वर्त्तमान उपासना के आधार, अवतारी, पैगम्बर, ईश्वर-पुत्र इत्यादि, भी अपने पिता (पूर्वज) के परिवार में ठीक वैसा ही जन्मे थे, जीए थे, और मरे थे, जैसा हमारे पिता (पूर्वज) के परिवार मे जन्मते है, और मरते हैं।

फिर उनके आगे (याने अवतारी, पैगम्बर, ईश्वर के एकलौता पुत्र इत्यादि के जन्माने के आगे) पूर्व में, और बहुत पूर्व मे भी, क्या—उनके ही पूर्वज या हमारे ही पूर्वज, ठीक वैसा ही, जन्मे, जीए और मरे नहीं थे?···· ··· अवश्य।

यह सृजन है और सृजन का शाश्वत नियम जन्मना, जीना और मरना है। उससे कोई वचित नहीं रह सकते हैं। और मैं सृजन धर्म की ही बात करता हूँ।

तो वैसे में, हम सभी, (अवतारियों तथा उनके नाम एवं रूप के पूजारक गुरुओं सहित साधारण, असाधारण हम सभी) को हर समय (भूत, वर्त्तमान एवं भविष्य) में, जन्माने, जिलाने एवं मारने वाले—दैव, (Divine)—क्या हममे से, किन्ही के लिए भिन्न हो सकते हैं?

नहीं, कदापि नहीं।···· ····

वे दैव तो, आदमियों से लेकर अवतारियों सहित, देवताओं तक, सभी जीवों को एक सामान जन्माने, जिलाने एवं मारने वाले—दैविक माँ (कुलेश्वरी—काल—नागे एरा) हैं। वे दैविक माँ एवं दैविक पिता रूपों के एक संयुक्त रूप अर्धनारीश्वर (One-none-dual) भी हैं। वे सभी के लिए ही एक समान हो सकते हैं। क्योंकि हम सभी इन्हीं के ही अंश हैं।

अगर वे भिन्न नहीं हो सकते हैं तो हम भी ठीक वैसा ही उस दैव के निकट हो सकते हैं; जैसा अवतारी, पैगम्बर एवं ईश्वर पुत्र निकट थे। या उनके चेले उनके ही निकट हो सकते हैं।

और सीधे उसे दैव से वैसा ही शक्ति (divine power) हासिल कर सकते हैं, जैसा शक्ति अवतारियों को हासिल था। या उनके नामों के उनके रूपों के उपासक एवं पुजारक तथाकथित गुरू (पं० पा० मौ०) हासिल कर सकते हैं।

और हम सीधे देव के निकट होने का अनुभव भी अपने शरीर में वैसा ही प्राप्त कर सकते हैं जैसा अनुभव कभी अवतारियों को प्राप्त था। या जैसा अभी तथाकथित गुरुओं को प्राप्त हो सकते हैं।

वशर्ते कि हमारा वैयक्तिक धर्म सही हो, हमारा परिवारिक घरेलू धर्म सही हो।

तब वैसा अनुभव प्राप्त कर, वैसा दैविक शक्ति प्राप्त कर, हम यह प्रदर्शित कर सकते हैं, कि दैव का दैविक अनुभव, दैव का दैविक शक्ति किनको कितना अधिक प्राप्त है। दैव के कौन कितना निकट है और अर्जित दैविक शक्ति किनका कितना प्रभावशाली है ?

जब हममे ऐसी क्षमताएँ (abilities) विद्यमान है, कि हम दैविक कृपा प्राप्त कर हम अधिक शक्तिशाली हो सकते हैं, तो तथाकथित गुरुओं (पं० पा० मौ० ई०) के बहकावे में पड़कर, विभिन्न मनगढ़न्त धर्मों के, मनगढ़न्त नियमों के सीमाओं के अन्दर अपने को हम क्यों दबाए रखें ? अपने को दबाए रखने का क्या औचित्य है ?

देव योग

तो यहां सोचना है, कि दैविक अनुभव के साथ दैविक शक्ति किस प्रकार प्राप्त किया जाए।

कोई अन्य तरीका नही है। केवल एक ही तरीका है। और वह तरीका देव के साथ योग (unity with the divine) का तरीका है।

तो दैव के साथ योग कैसे हो सकता है ?

—दैव के साथ योग—अपने को दैव तुल्य बनाकर ही किया जा सकता है।

जब अपने को दैव तुल्य बनाया जा सकता है और दैव तुल्य बनकर दैव से अपना सीधा संपर्क किया जा सकता है, और सीधा संपर्क स्थापित कर अपने (आत्मा) को दैव में ही समाया (mingle) जा सकता है, तो फिर हमें, भिन्नता प्रदर्शित करने वाली गिरोहों के भिन्न धर्मों से क्या मतलब है ?

और फिर हमारे जैसा ही, सृष्टि कर्त्ता (creator) की कृपा से, पुनः सृजन कर्त्ताओं (begotter father and mother-प्राकृतिक माता-पिता)

के द्वारा जन्मने वाले, विभिन्न धार्मिक नामों के तथाकथित धार्मिक गुरुओं से हमारा क्या-मतलब है ? दैविक कार्यों में उनके हम मुहताज क्यों बनें ? और फिर आर्थिक मामलों के भी मुहताज बनकर, अपने को, तथा अपने पुस्त-दर- पुस्त के पुत्रों को नीचा ही नीचा एवं आश्रित ही आश्रित क्यों बनाए रखें ?

....

तो यहां सोचने की बात है, कि अपने को दैव तुल्य किस प्रकार बनाया जा सकता है ?

अपने को दैव तुल्य, दैव को ही पसंद होने लायक अपनी पवित्रता (Holiness) को कायम रखने मात्र से, बनाया जा सकता है। अन्यथा नहीं।

इसके बाद, अपने को दैव तुल्य—दैव को ही पसंद होने लायक दैविक आचारों (Divine Conducts) को पालन करते रहने मात्र से ही बनाया जा सकता है। अन्यथा नहीं।

समाज को पसंद—समाजिक पवित्रता, को कायम रखने और समाजिक आचार को पालन करने से हम समाज तुल्य हो सकते हैं। पर दैव तुल्य नहीं हो सकते हैं।

भिन्न गिरोह को पसंद, भिन्न धार्मिक मापदंड के पवित्रता को कायम रखने और भिन्नता प्रदर्शित करने वाली आचारों को पालन करने से हम भिन्न गिरोह तुल्य एवं भिन्न धर्म तुल्य बन सकते हैं। परन्तु दैव तुल्य नही बन सकते हैं। और दैव तुल्य बने बिना दैव के साथ योग (union) कहाँ ? दैव के साथ सम्पर्क कहाँ ?

जब दैव तुल्य बनकर ही, दैव के साथ हमारा संपर्क सम्भव है तो जिंदगी भर भिन्न समाजिक, भिन्न धार्मिक पूजा, प्रार्थना, वन्दना और पढ़ना में शामिल होते रहने से ही क्या फायदा है ? और इस तरह अपनी जिंदगी को खपाने से ही क्या फायदा है ?

तो ऐसे में यहां यह विचार उठता है, कि हर व्यक्ति को अपने ही कल्याण के लिए, अपने परिवार की ही कल्याण के लिए, दैव को ही पसंद, केवल

अपनी पवित्रता का और अपने घर-परिवार की ही पूर्ण पवित्रता का क्यों नहीं चिन्ता करना चाहिए ? अवश्य। क्योंकि यह संभव है।

और समाजिक तथा कौमी पवित्रता का क्यों नही परित्याग करना चाहिए ?....अवश्य ? क्योंकि गिरोहों में पूर्ण पवित्रता का सुनिश्चय संभव नही है।

और फिर दैव को ही पसन्द, दैविक नियमों एवं दैविक आचारों के मुताबिक अपना तथा अपने घर-परिवार के नियम तथा आचार बनाए रखने का क्यों नही चिंता करना चाहिए ? अवश्य। क्योंकि यह संभव है। न कि भिन्न गिरोह के भिन्न धार्मिक नियमों एवं आचारों की चिंता करना चाहिए ?

तो वैसी हालत में, परम देव सहित, सभी देवों एवं निज पित्तर देवों को मान्य (acceptable) परम पवित्रता का मापदण्ड (standard) क्या होना चाहिए ?

दण्डनीय

अब यहाँ ध्यान देने की बात है, कि बहुमत से या सर्व सम्मति से स्वीकृत, जो समाजिक कर्म या जो धार्मिक कर्म, धरती पर के कानून के मुताबिक दण्डनीय नही हो सकता है, वही कर्म आसमानी दैविक कानून के मुताबिक दण्डनीय भी हो सकता है।

धरती के कानून के मुताबिक
जो कर्म दण्डनीय नहीं हो सकता है।
दैविक कानून के मुताबिक,
वही कर्म दण्डनीय भी हो सकता है ॥१॥
अतः धर्म का एक आड़ देकर,
जिस दण्ड को पचाया जा सकता है।
किसी का भी कोई आड़ देकर,
देवों से उसे छिपाया नही जा सकता है ॥२॥
अतः हे चालाक समझने वाले,
किसी दुष्कर्म को पचाने वाले,
भोगेंगे दुर्दशा, ऐ, ऐठने वाले,
किसी के आह पर सुख पाने वाले ॥३॥

ध्यातव्य—लोग कहते हैं, कि—किसी का हिम्मत है, कि उसके सामने कुछ बोल देगा ?

लेकिन, मैं कहता हूँ; आह भरने वाले—बोलते ही हैं। रूकते नही हैं। वे सही में चुप रहते नही हैं।

वे, भले ही डर के मारे, खून का घूंट पीकर, अपनी बोली, लोगों को व्यक्त नही करें। किन्तु उनकी अव्यक्त अन्तः बोली तो देवों को व्यक्त हो ही जाती है।

इसे अपने को बलशाली समझने वाले घमण्डी, पाखण्डी अच्छी तरह याद कर लें।

अतः भय दिखाकर, उल्लू सीधा करने वाले, दुष्टों के लिए व्यक्त बोली जितनी खतरनाक नहीं हो सकती है, उससे कई गुणा अधिक अव्यक्त बोली खतरनाक हो सकती है।

परिणाम यह होता है कि बलशाली का शरीर धीरे-धीरे रूग्न हो जाता है, जर्जर हो जाता है। सारा घमण्ड, सारा ऐंठन चूर-चूर हो जाता है। और उसकी बहुत दुःखद मृत्यु हो जाती है।

उनकी यह दशा देखकर तब भय से त्रसित एवं दुखित, दबे हुए लोगों को खुशी हो जाती है। कहने लगते हैं कि दैव का न्याय हो गया। उनके पास देर है; पर अन्धेर नही है।

अतः सही यही है कि दैव को पसन्द अपने तथा अपने परिवार के पवित्रता को, दैव को पसन्द नियमों एवं आचारों के रास्ते जिंदगी निर्वाह करते हुए, अपने ही तथा अपने परिवार के बचाव के लिए दैवों एवं पितरों एवं परम पिता परमेश्वर की कृपा प्राप्त की जाए।

तरल स्वच्छ

पवित्रता के लिए बाहर से नहीं, अन्दर से भी स्वच्छ हों।

जिस प्रकार स्वच्छ पानी का मछली, पानी के बाहर ऊपर से या बगल से झाँकने वाले को दिखाई देता है, और मछली को भी पानी के अन्दर से ही बाहर के देखने वाले को दिखाई देता है।

उसी प्रकार परम पवित्रता के द्वारा, शरीर के तरल स्वच्छ होने पर शरीर के अन्दर के आत्मा देव, शरीर के बाहर के आत्माओं एवं देवों को देख सकते हैं। और शरीर के बाहर देखने वाले देव भी, शरीर के अन्दर के आत्मा को देख सकते हैं और बाहर के देवों के शरीर के निकट आने के आभास को भी आत्मा देव, मालूम कर सकते हैं।

इस प्रकार निज पित्तरों और ईष्ट देवों के साथ आपसी सम्पर्क और आपसी दर्शन, परम पवित्रता (utmost purity) में आसानी से संभव हो

सकता है। और उनकी कृपा से अपना बचाव किया जा सकता है।

इसी संदर्भ में गन्दा पानी के भीतर के मछली और गन्दा शरीर के भीतर के आत्मा के संबंध में खूद से अन्दाज कर लीजिए। खूद से ही मिलान कर लीजिए।

न तो वह अन्दर से बाहर देख सकता है। और न बाहर वाले ही उसे अन्दर में देख सकते हैं। किसी प्रकार का आपसी सपर्क (योग-union) संभव नही हो सकता है। और अपना बचाव भी संभव नहीं हो सकता है।

तो फिर हर हर बमबम रटते रहने से ही क्या फायदा है। तो फिर अल्ला हो अकबर चिल्लाते रहने से ही क्या फायदा है। और डींग डींग घंटी बजाते रहने से ही क्या फायदा है ?

गुप्त रहस्य

अतः हे, महाशक्तिमान !.....

पवित्रता, परम पवित्रता संबंधी,.....

अपने को भिन्न समझने वालों की चाहे जो भी, समाजिक, धार्मिक, अध्यात्मिक, एवं तत्विक, भिन्न मान्यताएँ हों।

पर पवित्र हवा, पवित्र पानी, पवित्र भोजन, एवं पवित्र रहन सहन, के बिना तो, किसी का भी शरीर पवित्र नही हो सकता है।

ऐसी शारीरिक पवित्रता की पृष्टभूमि में भी, पवित्र संसारिक कर्मों पवित्र अध्यात्मिक सूकर्मों के बिना तो, किसी का भी शरीर सहित आत्मा, परम पवित्र होकर, पारदर्शी नही हो सकता है।

इतनी ऐसी पवित्रता के बिना, महादेव (God, Alha, Ishwar) का तो क्या—बहुत छोटे देव एवं निज पित्तर देवों का भी आपसी सम्पर्क कैसे संभव हो सकता है ? आपसी दर्शन कैसे संभव हो सकता है ?

और दैविक संपर्कों के बिना, दैविक दर्शनों के बिना, किसी योगी-योगिन दम्पति को, या किसी भक्त या सन्त को, दैविक कृपा (divine grace) किस प्रकार प्राप्त हो सकती है ? और अपना तथा परिवार का बचाव भी किस प्रकार संभव हो सकता है ?

अतएव हे, महाशक्तिमान !

मेरे अपने ही त्राण के लिए, मेरे अपने ही परिवार के कल्याण के लिए, मेरे अपने ही संबंधियों (होगा अण्डों: वाला) के त्राण के लिए मैं जिन वस्तुओं का उपयोग करूँ, वे सभी पित्तरों के पसंद के लायक, देवों के पसन्द के लायक एवं महादेव के पसंद के लायक हो। जिससे कि मेरा शरीर सहित आत्मा तेरी पसन्द के लायक हो जाए।

भोज्य वस्तुओं को वैसा पवित्र बनाने लायक ज्ञान के लिए तेरी कृपा मुझको हमेशा प्राप्त हो। जिससे कि मैं अपवित्रता को जान सकूँ, समझ सकूँ, परख सकूँ और उससे वंचित रह सकूँ।

मुझे ऐसी कृपा प्रदान करें कि इसके अलावे अगर कोई चीज अपवित्र हो, तो मंत्र शक्ति से संचालित, मेरे हाथ से छूने मात्र से वे चीज पवित्र हो जाएँ, वैसी मंत्र शक्ति के लिए, तेरी कृपा मुझे हमेशा प्राप्त हो।

———

असली शर्त

सभी पित्तर जीव ही समय चक्र में देवत्व को प्राप्त होते हैं। कोई बहुत जल्द, कोई बहुत देर के बाद, देवत्व को प्राप्त होते हैं। परंतु कुलाचारी पित्तर जीव तो हमेशा देवत्व में ही बने होते हैं। या अपने को देव तुल्य बना लेते हैं, वे भी हमेशा देवत्व में ही बने होते हैं।

इसलिए अपने ही त्राण के लिए, अपने ही परिवार के त्राण के लिए, अपने ही सुख शांति के लिए, अपने परिवार के ही सुख शांति के लिए, जब आप देवों से दोस्ती करना चाहते हैं, उनसे सदा सपर्क रखना चाहते हैं, उनका साक्षात दर्शन करना चाहते हैं, तो अपने को भी देव तुल्य ही बनाना होगा।

देवों को खुस रखने के लिए देवता जैसा चाहते हैं, वैसा ही पवित्र आचरण भी करना होगा न कि धर्म गुरु जैसा चाहते हैं, वैसा आचरण करना होगा।

जिस वातावरण को देवता चाहते हैं, उसी वातावरण को ही खास अपने घर परिवार के लिए भी सदा कायम रखना होगा।

अन्यथा देवों के साथ की दोस्ती, जरा सी गलती करने पर, किसी भी क्षण टूट सकती है।

तब फिर ऐसे में अन्दाज कीजिए कि देवता का नाराज होना, अपने ही लिए, तथा अपने ही परिवार के लिए कितना खतरनाक हो सकता है ? सोचने की बात है।

और नहीं तो कितनी ही बड़ी विपति क्यों न हो, कितनी आसानी के साथ टल सकती है ! यह भी सोचने की बात है।

....

इसलिए, हे महाशक्तिमान !

पितरों के एवं देवताओं के संपर्क को बनाए रखने के लिए और उन्हें हमेशा खुश बनाए रखने के लिए, मेरे अपने आत्मा देव (own spirit) के निवास वाली, मेरे इस शरीर रुपी मंदिर (body temple) को इतना तरल स्वच्छ बनाना होगा, जितना तरल स्वच्छ बनाने पर, अन्तः आत्मा देव (Inner god), शरीर मुक्त बाहयदेवों (body less external gods) को ताक (peep) सकें और शरीर मुक्त बाहयदेव भी शरीर युक्त आत्मा देव को ताक सकें और अन्तः देव योग निद्रा में शरीर से निकल कर, बाहयदेवों के साथ मिलकर, वृहत ब्रहमाण्ड में विचरण कर सकें।

अतः इसके लिए इतनी ऐसी योग्यता के लिए मुझमें सदबुद्धि कुलाचारी बुद्धि का ही विकास हो। क्योंकि ऐसा कुलाचारण के द्वारा ही संभव हो सकता है।

—:—

त्राण चक्र

अतः हे, महाशक्तिमान !

जब कुलाचार का कुल चक्र ही वास्तव में त्राण चक्र है, तो कुलाचार का कुलचक्र और कुलचक्र का कुलधर्म को सदा कायम रखने के लिए, क्या—क्या—आवश्यक है ?

अनगिनत पवित्र पिता एवं पिता महानों के सिल—सिले के, गोत्रीय (किलि) कुल के, उत्तरोत्तर पवित्र पिताओं के शुद्ध पवित्र खून का कुल के उत्तराधिकारी पुत्र-दर-पुत्रों में उतरते आना आवश्यक है।

इसके लिए चाहे, कोई कुछ कहे.....

पत्नि का प्राण की आहुति पर भी पतिव्रता को कायम रखना पवित्रता के लिए आवश्यक है।

उसी प्रकार हर कीमत पर, पति का पत्निव्रता को कायम रखना पवित्रता के लिए आवयश्क है। इससे भी अधिक पर-नारियों को माँ तुल्य देखना आवश्यक है।

वैसे पवित्र सम्भोगी दम्पति को आपस के परस्पर पवित्र शरीरों को छोड़कर अन्य शरीरों से अछूता रहना आवश्यक ही नही परम आवश्यक है।

क्योंकि दूसरे पुरुष के संपर्क से दूसरी नारी के संपर्क से उत्पन्न शारीरिक अपवित्रता को भ्रमात्मक विचार से, अगर गंगा स्नान से दूर किया जा सकता है, पर किसी भी विचार से, आत्मा की अपवित्रता को तो किसी भी स्नान के द्वारा दूर नहीं किया जा सकता है।

पर वास्तव में शरीर की अपवित्रता को भी, गंगा स्नान से दूर नहीं किया जा सकता है केबल मल साफ हो सकता है। पर अपवित्रता साफ नहीं हो सकता है।

अतः कुलाचार में वीरता के साथ दम्पति को शारीरिक एवं आत्मिक पवित्रता को कायम रखना आवश्यक ही नहीं परमावश्यक है। इसे नव दम्पति को दाम्पत्य जिंदगी के आरंभ से ही स्मरण रखना चाहिए।

अगर किसी कारण वश ऐसी पवित्रता को कायम रखने में गलती हो जाता है तो पित्तर देव एवं अन्यदेव तुरत ही नाराज हो जाते हैं। और गन्दे हाथों से भोग स्वीकार नहीं करते हैं। इससे घर परिवार में गंभीर अप्रिय घटना भी घट सकती है।

इस स्थिति से छूटकारा पाने के लिए फिर से पवित्रता के नियमों का सहारा लेना चाहिए। और दो दिनों का कठोर व्रत करते हुए, कई लाख मंत्र जाप के द्वारा, अपने शरीर को परिशुद्ध कर पवित्र नारियल (ठाव) का पानी, संतरा एवं नींबु के रसों का एवं केला के फल का, भोग अर्पण, महादेव एवं महादेवी को अर्धरात्रि में करना चाहिए। और इस प्रकार देवों के आक्रोश को शांत कर देवों की कृपा को, फिर से प्राप्त करना चाहिए।

इस बात का ख्याल रहे कि, फिर कभी गलती नहीं हो

हे, महाशक्तिमान.....

इन अमुल्य बातों को, इन अमुल्य शर्तो को, सदा स्मरण रखने का, मुझमे तथा दम्पतियों में, विवेक ज्ञान जागृत हो।

—:—

जूठा (Untouchability)

इस संसारिक जिंदगी में, पवित्रता के नाम पर, जब एक आदमी के जूठा गिलास में पानी पिया नही जा सकता है, एक आदमी के जूठा थाली में भोजन किया नहीं जा सकता है; तो फिर पवित्रता के ही नाम पर मेलाओं में होटलों में सरायों में या अपने घरों में, एक व्यक्ति के संभोग से जूठा की गई नारी के साथ दूसरा व्यक्ति जूठा स्वीकार करते हुए, किस प्रकार संभोग कर सकता है ?

क्योंकि जूठा पानी, जूठा भोजन के सेवन से तो केवल शरीर ही अपवित्र हो सकता है, पर जूठा शरीर के सेवन से तो शरीर सहित आत्मा ही अपवित्र हो जाती है।

फिर अगर दूर की बात सोची जाए तो पर-नारियों के साथ संभोग करने में, दिलचस्पी लेने वाले व्यक्तियों के लिए यह पहले से किस प्रकार सुनिश्चित किया जा सकता है, कि इस बार उसके भोग विलास के लिए जिस नारी को उपलब्ध किया जाने वाला है, वह, नजदीक के या दूर के रिस्ते में, उसकी बेटी है, बहु है, बहन है ? या अपनी पत्नि ही है ? क्योंकि अपना आचरण खराब होने पर पत्नि सहित सभी का आचरण खराब हो जाता है।

क्योंकि अपने ग्राहकों को खुश करने के लिए सब कुछ प्रबंध करने वाले होटलों में अपने रिस्ते के नारियों से वैसी अकस्मात मुलाकात होने की घटनाएँ अक्सर सुनी जाती है।

तब पर नारीयों (call-girls) का सेवन तो पशु तुल्य ही है। क्योंकि केवल पशु पक्षियों एवं कीड़े मकोड़ों को ही, अपने जन्म के संबंधों का पता नहीं होता है।

यही तो असली जूठा (छूआछूत) है, वैसा जूठा व्यक्ति से भला; किनको छुआना चाहिए ?

जो इस बात को समझ नही पाता है, वह अधम है। और जो अपने को इस अपवित्रता से वंचित नहीं रख पाता है, वह अधम (damned) है।

क्योंकि पूर्णिमा के, अमावश्या के, या ग्रहण के, अवसर पर, किसी घाट पर, या किसी सँगम पर के, स्नान से भी, जूठे नारियों के साथ नरों के संभोग

का या जूठे नरों के साथ नारियों के संभोग का अपवित्रता दूर नही हो सकता है।

साधु सन्यासियों सहित बहुत सारे लोगों के, पूर्णिमाओं में, अमावश्याओं में, एवं ग्रहणों में गंगा स्नान एवं संगम स्नान से पवित्रता होने की मान्यता है। इस मान्यता के मुताबीक अगर इस बात को भी स्वीकार कर ली जाय कि वैसे स्नान से कभी जूठों से गंदा की गई शरीर पवित्र हो जाता है, किन्तु पर नारी के सेवन से गंदा की गई, शरीर के आत्मा की गंदगी (अपवित्रता) तो किसी भी स्नान से पवित्र नहीं हो सकती है।

और अपनी आत्मा के पवित्रता के बिना आत्मा का परमात्मा के साथ या निज पित्तर आत्मा के साथ योग (union), भला—किस प्रकार संभव हो सकता है ?

भला—वैसे में; भक्त को, साधक को, योगी को, आत्मा के द्वारा पित्तर आत्माओं, देव आत्माओं एवं परम आत्मा के संपर्क से उत्पन्न परमान्द (Bliss) का अनुभव शरीर में किस प्रकार मालुम हो सकता है ?

अद्वितीय सलाह (आदिवासियों को)

अतः जिंदगी में प्रथम बार या जिंदगी में द्वितीय बार कभी अपना सहचारिणी जब चुनना हो तो, निर्दोष (chaste) सहचारिणी को ही चुनना चाहिए।

क्योंकि कुरूप होने का दोष, एवं सांवली होने का दोष को तो उसके हृदय की सुन्दरता से मिटाया जा सकता है।

उसके निर्धन होने का दोष को भी, बाद के धन की बढ़ोत्तरी से मिटाया जा सकता है।

उसके अनपढ़ होने का दोष को भी, बाद के प्रौढ़ शिक्षा से मिटाया जा सकता है।

किन्तु छुआने (Lost chastity) का दोष को तो किसी प्रकार भी मिटाया नहीं जा सकता है।

इसी एक कारण से उसके हाथों के द्वारा पित्तरों एवं देवों (ओवा गोए) को कभी भोग स्वीकार्य नहीं भी हो सकता है। अगर देवों को भोग स्वीकार्य हो भी जाए, तो भी जिंदगी का वह दोष तो दोष ही है।

तो ऐसे में दाम्पत्य जिंदगी मे क्या आनन्द हो सकता है सोचने की बात है।

अतः जिंदगी में, अगर किसी को घमण्ड करना भी चाहिए तो, किसी बात का घमण्ड नही, केवल एक निर्दोष (वोंगा को जकेन काकी जुटिड तड) सहचारिणी (जूड़ी) को प्राप्त करने का ही घमण्ड करना चाहिए न कि शिक्षा, सौन्दर्य एवं सम्पति का घमण्ड करना चाहिए।

अगर निर्दोष (चरित्रवान) सहचारिणी के साथ खूद भी निर्दोष हो तो ऐसे में जिंदगी का आनन्द तो क्या, जीवन का आनन्द भी अपने घर से स्वर्ग तक इतना भर पूर हो सकता है, कि जितना केवल स्वर्ग में स्वर्ग वासियों को नही हो सकता है। वैसे दम्पति के घर में तो स्वर्ग का आनन्द ही उतर आता है।

वैसे निर्दोष (चरित्रवान) दम्पति अगर सही कुलाचारी हो, तो वे जीवों को तो क्या—देवों को ही आसानी से आकर्षित कर सकते हैं। उन्हें आसानी से जीत भी सकते हैं। क्योंकि वैसे दम्पति के घर में पित्तर एवं देव तो क्या खूद महादेव (God) ही वास करने लगते हैं।

अगर शादी करने (जोड़ी बनने) के पहले वे दोनों निर्दोष न भी रहे हों पर शादी करने के बाद अगर वे बिलकुल निर्दोष दम्पत्य जिंदगी निबाहने लगे तो भी निर्दोष दम्पतियों के जैसा ही दैविक आनन्द का अनुभव हो सकता है।

परन्तु निर्दोष तो निर्दोष है ही।

फिर तो वैसे दम्पति क सामने दुषित (चरित्रहीन) दम्पतियों के शिक्षा सौन्दर्य एवं सम्पति का घमण्ड ही किस काम का ?

अतः कुरूप होने, सांवली होने, निर्धन होने एवं अनपढ़ होने के कारण निर्दोष (चरित्रवान) का तिरस्कार करना भारी मूर्खता है। इसके विपरीत चरित्रवान का पूजा सत्कार करना, तो साक्षात भगवान एवं भगवती का ही पूजा सत्कार करना है।

आप इस बात को माने या नहीं माने, पर यह सत्य है।

"God is more near to illiterate, rather than the literates"

"It is easier for the Virgin to draw the attention of the Divine through devotion" rather than by the corrupt.

....

इन कारणों से और आगे, मेरा यह भी सलाह होता है, कि किसी कारणवश, अगर आप अपने धर्म पत्नि (पहली पत्नि) के सेवा से संतुष्ट नहीं हों तो, किसी भी हालत में दूसरी नारियों (call girls) वेश्याओं, या किसी के मजबूरी का फायदा उठाते हुए, कमजोर वर्ग की नारी के साथ संभोग नहीं करें।

अपवित्रता का स्मरण करते हुए, अपने मन को रोकें। अपने मन के साथ बुद्धि के सहारे बहादूरी के साथ लड़ाई करें। लोभी लालची मन को जीत लेना ही असली वीरत्व है। (The real bravity lies in conquering the mind).

फिर भी अगर आप अपने को नहीं रोक सकें, और किसी कारणवश आप मजबूर हो गए हों, तो जिस नारी के तरफ आप अनावश्यक तौर से झूक गए हैं; उससे अपनी धर्म पत्नि का राय लेते हुए, आप शादी ही कर लें। उसको अपना स्थायी सहचारिणी ही बना लें।

अब आप के दो स्थायी पत्नियाँ हो जाती है। यह मंजूर है। इतना से आप संतुष्ट हो जाएँ। पर अब से किसी भी हालत में बहेली नारियों (call girls) के साथ आप सपर्क (संभोग) नहीं करें।

क्योंकि अपने घर की पहली या दूसरी पत्नि के पवित्रता का आप पक्का सुनिश्चय (guarantee) कर सकते हैं। पर दूसरे घर के नारियों के पवित्रता का सूनिश्चय आप नहीं कर सकते हैं। अगर दूसरे घर की नारी के पवित्रता का आप सूनिश्चय कर भी सकते हों तब पर भी आपको दो पत्नियों से ही संतुष्ट रहना चाहिए। क्योंकि इससे आपकी जिंदगी सुखमय होगी। लौकिक एवं पारलौकिक दृष्टि से सुखमय होगी।

नौकरी करते हों, और नौकरी के कारण परदेश में रहते हों तो अच्छी बात है। परंतु नौकरी के कारण या परदेश में रहने के कारण, किसी भी

हालत में अपने घर के खेती को, आपको उपेक्षा (neglect) नहीं करना चाहिए। क्योंकि खेती आपके बचपन का आधार है। इसके अलावे घर में पूर्वजों (manes) के पवित्र भोजन पानी के भोग अर्पण के प्रबंध का, आपको कभी भी, किसी हालत में भी उपेक्षा नहीं करना चाहिए। क्योंकि घर का रसोई (आर्दिग) पित्तरों एवं देवों के पालन का आधार है।

हर हालत में पित्तरों एवं देवों का पालन करना चाहिए। क्योंकि इससे अपना ही पालन होता है। अगर रसोई (आर्दिग) पवित्र हो तो परदेश के आदमी को कोई खतरा नहीं हो सकता है।

अगर आप घर से दूर, परदेश में नौकरी करते हों तो, अपने पालन के लिए, अपने परिवार के लिए, पित्तरों एवं देवों के पालन में दो पत्नियाँ होने पर सहूलियत हो सकती है। एक पत्नि घर पर खेती संभालते हुए रसोई की पवित्रता को सबके, (खासकर आपके) पालन के लिए कायम रख सकती है। और दूसरी पत्नि भी परदेश में आपके सेवा के साथ परदेश के रसोई की पवित्रता को सबके लालन-पालन के लिए कायम रख सकती है। वे पारी-पारी से घर एवं परदेश में रहकर दोनों स्थानों के रसोईयों को पित्तरों एवं देवों के साथ आपसी लालन-पालन के लिए पवित्र कायम रख सकती है।

ऐसी विस्तृत विचारों का समन्वय स्थापित करते हुए एक पति के दो पवित्र पत्नियों को, घर एवं परदेश के रसोईयों को पवित्रता कायम रखते हुए, पित्तरों एवं देवों को अर्पित भोजन पानी का प्रसाद (पूजा अर्पण अवशेष) खिलाने में सुख का अनुभव करना चाहिए। और पवित्र पति के संरक्षण में अपनी पतिव्रत पवित्रता का आनन्द लूटना चाहिए और ऐसी ख्यालों के साथ जीते हुए आपस में लड़ाई नहीं करना चाहिए।

आखिर सबको यही सोचना चाहिए कि जीवित अवस्था में हमारी जिंदगी कुल की जिंदगी है! और मृत्यु के पश्चात् हमारे जीव का जीवन कुल का जीवन है। अपने घर के कामों में वृद्धि के कारण या अपने कल्याण के आगे परिवार के कल्याण में और परिवार के आगे समाज के कल्याण के कामों में वृद्धि के कारण बहुत सी असाधारण स्थितियाँ भी आ सकती है। जिसमे दो पत्नियों के रहते हुए भी पति को सेवा का सुख कुछ भी नहीं मिल सकता है।

एक पत्नि घर की खेती-गृहस्थी को संभालते हुए, घर के रसोई (आदिंग) की परम पवित्रता को संभालते हुए, पित्तरों एवं देवों की पूजा में व्यस्त है। पति सहित परिवार के लालन-पालन की उनकी यह भक्ति सही है।

दूसरी पत्नि शहर के निकट में नया घर बसाकर रहते हुए, अपनी पवित्रता, घर के रसोई की पवित्रता को सदा कायम रखते हुए और बच्चों की पढ़ाई का इंतजाम में व्यस्त रहते हुए, पित्तरों एवं देवों की पूजा सेवा मे भी व्यस्त है। पति सहित परिवार के लालन-पालन के लिए उनकी यह पवित्रता भक्ति सही है।

घर की गृहस्थी, बच्चों के पढ़ाई की गृहस्थियों में तालमेल रखते हुए दोनों पत्नियाँ जब अपने-अपने कामों को छोड़कर, परदेश में नौकरी करते हुए अपने पति की सेवा में अपनी असमर्थता प्रगट करती हैं तो पति को मजबूर होकर परदेश में अकेला जिंदगी गुजारने के लिए जाना पड़ता है। नौकरी के कामों को अच्छी तरह प्रशंसनीय ढंग से संभालते हुए, अकेले जिंदगी के कई तरह के कठिनाईयों को बर्दास्त करते हुए पवित्र रहकर अपने कल्याण के आगे, परिवार के कल्याण के आगे, समाज के कल्याण के कामों का बोझ जब ढोना चाहते हैं तो उनको एक अच्छा ही नहीं बहुत अच्छा भक्त सेवक (servant) होना ही चाहिए।

जब अच्छा सेवक तो क्या, केवल सेवक भी नहीं मिलते हों और दोनों पत्नियाँ सेवक के खोज में भी परेशान हो गए हों, तो दोनों पत्नियों के द्वारा पति को एक सेविका अपने स्तर से ही प्रबंध कर लेने का सलाह देना स्वाभाविक ही है।

लेकिन उनके सलाह के बावजूद भी, परदेश की तकलीफों को बर्दास्त करते हुए, पवित्र हालत में ही अकेले रहना कम धैर्य की बात नहीं है। और इस बीच नौकरी के कामों के साथ समाज के कामों का बीड़ा को भी दिलचस्पी के साथ उठाना, कम साहस की बात नहीं है और समाज के कल्याण के लिए ऐसी सपना देखना, जो असंभव सा जान पड़ता है, कम आत्म विश्वास की बात नहीं है।

पति को कोई कमी नहीं, फिर भी अकेलापन है। लोग पूछते हैं कि परिवार कब लायगें? सवाल का जबाव क्या हो? जबाव यही होता है कि परिस्थिति ऐसी नहीं है कि परिवार आवे भी तो मेरे साथ रह सके। इसलिए बहुत समय तो अकेला ही जिंदगी निभाना होगा। डेरा बहुत बड़ा और बिलकुल अकेला रहना कितना भयानक लगता है? ऐसे में लोग फिर सवाल करते हैं, कि क्या महाशय, इतना बड़ा डेरा में अकेलापन का भय, अकेलापन का चिंता आपको नहीं होता होगा? जवाब होता है, नहीं, कुछ नहीं।

किसी को विश्वास नहीं। लेकिन तब भी कहते हैं कि मुझको कभी तकलीफ नहीं। दिन में अकेला अवश्य हैं। पर रात में तो दैविक परिवार साथ हैं। रात की, परलोक की हँसी खुशी के मुकाबिले तो दिन के अकेलापन का तकलीफ कुछ नहीं। फिर पित्तरो को, देवों को, मेरी तकलीफ का जब चिंता नहीं है तो संसारिक लोगों के चिंता करने से ही क्या होता है? इस कारण अकेलापन की तकलीफ में ही खुशी है।

किसी चीज की कमी खटकती नहीं है। केवल एक चीज की कमी ही बहुत खटकती है। केवल पवित्र रहन सहन के पवित्र भोजन एवं पानी की कमी ही खटकती है।

केवल इसी एक कमी के कारण ही, यह सलाह देना पड़ा है कि दोनों पत्नियों के सलाह के अनुकूल ही तीसरी पत्नि के रूप में एक भक्तिन सेविका को प्रबंध करने के लिए, पति सोच सकता है। क्योंकि डेरा में भोजन केवल खाने के लिए, खाने लायक नहीं पकना चाहिए, वरण पूजा अर्पण के लायक बनाकर, पित्तरों एवं देवों को अर्पण के बाद ही खाने लायक बनना चाहिए। लेकिन तीसरी सेविका के अतिरिक्त और अन्य नहीं। इन तीनों के अतिरिक्त और अन्य नहीं। क्योंकि वैसा करते जाना, दुःखद मृत्यु का इंतजाम करते जाने के बराबर है।

राजा दशरथ ने राजा होते हुए भी तीन रानियों से ही विवाह किया था। और तीनों रानियों की पतिव्रत पवित्रता में ही सुख से जिया था। इस कारण आदिवासियों को इससे अन्य नारियों से यौन संपर्क रखने को अनुमति नहीं दी जाती है।

लेकिन पति के लिए एक विवाह से अधिक दो या तीन विवाहें तभी होनी चाहिए जब कि उनके सही लालन-पालन के लिए पति की आर्थिक स्थिति अच्छी हो या एक पत्नि के आर्थिक स्थितियों के उत्तरोत्तर बढ़ोतरी होते जाने की संभावना हो। मात्र यौन संपर्क का आनन्द लूटने के लिए नहीं। वरन पवित्रता को सब तरह से सही कायम रखने के लिए ही दो या तीन पत्नियों की सेवा प्राप्त करने के लिए पति को स्वीकृति दी जाती है। एक पत्नि हो या दो या तीन पत्नियाँ हों, पत्नि के लिए अपने पति को छोड़ कर, किसी अन्य से यौन संपर्क रखने की कतई अनुमति नहीं दी जाती है। क्योंकि उन्हें तो पवित्रता कायम रखनी है। वे तो पति के पवित्रता के ही आधार हैं। अगर आधार ही दुषित हो जाए तो खूद ही सोचिए कि कौन सी दैविक आपति परिवार को नष्ट करने के लिए उद्यत नही हो सकती है? पित्तरों सहित कौन सा देव क्रोधित हो, परिवार को परेशान नही कर सकता है?

मैं यहाँ आपको स्मरण करा देना चाहता हूँ कि राजा दशरथ सहित तीनों रानियाँ (कौशल्या, कैकेयी, सुमित्रा) के परम कुलाचारी पवित्रता के कारण ही उस परिवार में भगवान राम का जन्म हुआ था। अन्यथा भगवान के जन्मने की संभावना कहाँ? अतः राजा दशरथ कोल थे और भगवान राम कोल पुत्र थे।

इसलिए पति को अपनी पत्नि को या पत्नियों को देवी मानकर ही जिंदगी निभाना चाहिए। और किसी हालत में भी नाराज नहीं करना चाहिए। अपना प्राण जाए तो जाए पर पत्नि नाराज न हो। पत्नि को नाराज नहीं करना चाहिए। और पत्नि को, हरेक पत्नि को, अपने पति को ईश्वर मानकर ही जिंदगी निभाना चाहिए और अपनी पतिव्रत पवित्रता से उसे हमेशा खुश रखना चाहिए। पित्तरों सहित देवों को भी पवित्र भोजन पानी के भोग अर्पण से खुश रखते हुए उनका ही प्रसाद (अर्पण अवशेष) भोजन पानी पति को खिलाना चाहिए।

———

Divine Advice to Male & Female

Do not leave your Siemen
In the womb of a woman
Who is not your pious wife.
Do not bear the siemen
Of a smiling gentleman
Who is not your husband.

Lest both the conditions
Prove fatal to Divine Discipline.
And to your Genealogical Line.

....

Disrupted parentage
Shall lead to such a stage
None has the knowledge
Who is the Father of whom ?

....

And this is a position
Unsuitable for becoming
Kulyogi and Kulyogin.

———

कुलाचार परमोपदेश

(१) धार्मिक आध्यात्मिक, एवं तत्व ज्ञान संबंधी वैसे किसी के भी बात को, वैसे किसी के भी लेख को, स्वीकार करना उचित नही है, जो तर्क संगत नहीं है ।

....

(२) वे धार्मिक, आध्यामिक एवं तत्व ज्ञान ही क्या ज्ञान है, और उसमे संबंधित वे पूजा, प्रार्थना, पढ़ना इत्यादि दैविक क्रिया कर्म ही क्या, क्रिया कर्म है, जिनके अनुशरण करने पर तत्काल या कुछ विलम्ब से, दैविक फल दिखाई नहीं देता हो ?

वैसे अन्दाजी धार्मिक, आध्यात्मिक एवं तत्व ज्ञानों का तथा उससे संबंधित क्रिया कर्मों का तो अविलम्ब परित्याग करना चाहिए ।

.....

(३) मैं यह कभी नहीं चाहता हूं कि आप मेरे कुलाचार मतों को मानें । लेकिन तिरस्कार करने के पहले मैं यह अवश्य चाहूँगा कि आप उसे तर्क की कसौटी पर अवश्य ही कसने का कोशिश करें । अगर उपयुक्त मालूम पड़े तो दूसरों का परवाह किए बिना, दृढ़ निश्चय के साथ उसे स्वीकार करें । और तत्पश्चात किसी का परवाह किए बिना दृढ़ निश्चय के साथ कुलाचरण ही करें । और कुलाचरण करते हुए अपने कुलधर्म की परीक्षा करें । गलत हो तो बतावें ।

....

(४) यह अवश्य मन में ख्याल रखें कि दैविक ज्ञान (विवेक ज्ञान) रास्ते में अपने भाग्य का या अपने क्षमता का निर्माता या विकास कर्त्ता, खुद आप ही हो सकते हैं, अन्य नहीं हो सकते हैं ।

गुरू तो आरंभ का प्रेरक मात्र ही हो सकते हैं । उसी प्रकार पुस्तकें भी केवल आरंभ का प्रेरक मात्र ही हो सकते हैं ।

अगर सही ज्ञान के लिए आपको गुरू की ही आवश्यकता हो, तो किसी एक गुरू पर ही निर्भर नहीं करें, वरन कई एक गुरूओं का शरण लें । उसी प्रकार सही

ज्ञान के लिए आपको पुस्तक का ही भरोसा करना पड़े तो एक पुस्तक नहीं, कई एक पुस्तकों का सहारा लें ।

ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार अपने रोग के निदान (ईलाज) के लिए आप एक डाक्टर नही, कई एक डाक्टरों का सलाह लेते हैं ।

कई गुरूओं से प्राप्त ज्ञान का, कई पुस्तकों से प्राप्त ज्ञान का, अपने से ही सार तत्व (conclusion) निकालने में आपको जितना संतोष हो सकता है, उतना किसी के द्वारा नही ।

अगर कोई सहारा नही मिले । तब भी कोई चिंता की बात नही है । क्योंकि-आखिर, जिनके गुरू कोई नहीं है, उनके गुरू तो खुद शिव जी (मरंगवोंगा) है । आदित्य देव (सींगवोंगा) है ।

....

(५) लेकिन कोई भी दैविक ज्ञान, दैविक अनुशासन के बिना संभव नही है । कुलाचार में, दैविक अनुशासन अत्यंत पवित्रता पर आधारित है । इसलिए सभी दैविक कार्यों के लिए कुलाचार में निर्धारित, या कुलाचार के लिए आवश्यक पवित्रता का दम्पति को दृढ़ता के साथ पालन करना चाहिए ।

पवित्र रहकर, अदृश्य पवित्र धागे से प्रकाश रूप पवित्रों (manes in divine light form or divine light Like manes) पित्तर देवों के साथ हमेशा बंधे रहें, ऐसी उत्कृष्ट आकांक्षा के साथ ही प्रत्येक, नव दम्पति को संसार में जीना चाहिए । और इस ख्याल के पृष्ट भूमि में ही संसारिक व्यवहार, आरंभ करना चाहिए ।

....

(६) क्योंकि जब किसी भी पुत्र का इस (मृत्यु) लोक में, माता पिता के एक मात्र द्वारा के बिना आना (जन्मना) संभव नहीं है; तो वैसे में जिंदगी के अंत (मृत्यु) के बाद, दिवंगत मां आत्मा, पिता आत्मा के एक मात्र, द्वारा के बिना ही, किसी पुत्र को स्वर्ग लोक में पहुंचना क्या-संभव है ?

जब आपने माता पिता के गोदी के बाद ही धरती के गोदी पर पांव रखा तो आप के मरने के बाद आत्मा रूप में दिवंगत मां आत्मा या पिता आत्मा के गोदी के बिना ही क्या स्वर्ग लोक की गोदी पर आप पांव रखेंगे ?....— शायद नहीं ।

(७) इस बात को परख कर देखें, कि जब तक आप जीवित रहते हैं, तब तक बहुत से आपके अपने हैं। भिन्न धर्म अपना है। भिन्न धर्म के गुरू (पं० पा० मो०) अपने हैं। यहाँ तक कि पैगम्बर (Incarnation) अपने हैं।

किन्तु जब आप भारी कष्ट में हैं या जब आप मरने पर होते हैं या जब आप मर जाते हैं तो उन बहुत सारे अपनों में से अपनी पत्नि को छोड़ कर और अपने कई पुत्रों-पुत्रियों में से भी अपने एक पुत्र-पुत्री को छोड़कर कोई भी अपने नहीं होते हैं। श्राद्ध क्रिया के बाद, अन्य लोग तो क्या— पुत्र तक भी, यह कह कर भिन्न हो जाते हैं, कि वे जैसा किए थे, वैसा पाएँ।

विश्वास मानिए, मरने के मात्र पन्द्रह दिनों के बाद, नाम लेने वाला तक भी नहीं होता है। और तो और, यहाँ तक कि अचल सम्पत्तियों के खतियान से भी आपका नाम हटा दिया जाता है।

यही तो भिन्न धर्मों, भिन्न संस्कृतियों का कमाल है।

काश, अपना "कुलाचार" का ही संस्कार होता !
काश, अपना "कुल धर्म" का ही धारण होता !

तो सरकारी खतियान से नाम कट जाता तो कट जाता, परन्तु अपने जन्म के श्रोत के, कुलचक्र में जन्मते जाने वाले, पुत्र-पौत्रों के पूजा अर्पणों के खतियान से तो अपना नाम हट नहीं जाता।

अब आप ही विचार कीजिए कि जिस धर्म में, पिता बनकर भी माता बनकर भी, मरने के बाद अपने ही घर के रसोई (आदिग) में आपके नाम से आह्वान कर नित्य पवित्र भोजन पानी का पूजा अर्पण करने वाला नही हो, तो वैसे धर्म को मानने से ही क्या फायदा है ? वैसे धर्म में बने रहने से ही क्या फायदा है ?

धर्म तो ऐसा होना चाहिए कि जिसमें अपने पीछे अपना ही पुत्र पुजारी रह जाए।

जात

भारत में अगर प्रत्यक्ष चार जात है।
तो, अप्रत्यक्ष पाँचवाँ भी एक जात है।।
जो सभी जातों का अकेला एक जात है।
और वह कुलाचारियों का कोल जात है।।

भारत में अगर सामूहिक पूजा पाठ है।
ऊँची आवाजों के सजावटी पूजा पाठ है।।
तो बिना आवाज के घरेलू भी पूजा पाठ है।
गुप्त रीति के कोलों के गुप्त पूजा पाठ है।।

मिलान कर, कहता हूँ, यह बात है।
उत्तमों में उत्तम कोल ही एक जात है।।
जग मे जितने तरह के पूजा पाठ हैं।
उत्तमों मे उत्तम तो गुप्त ही पूजा पाठ है।।

भीड़ भड़ाके में देव आते नहीं पास हैं।
चिल्लाहटों से भी हो जाते निराश हैं।।
पर एकान्त के जाप से वे आते पास हैं।
अन्नों का भोग पाकर दे जाते शावास हैं।।

ध्यातव्य—सामूहिक पूजा=एक दिन में सब तरफ किया जाने वाला पूजा।

Because, when, one with the knowledge of Veda, and adoption of Vedachara, can command respect in the Human world, the Kols with the knowledge of Kula, and adoption of Kulachara, can command respect in both the worlds (Human and Divihe worlds) together.

Life's Riddle

The preachers told you,
The books taught you.
With piety you go to Heaven,
With sins you enter Hell-in.

As it is the common teaching.
As such is fit for easy grasping.
But you can stay in Hell or Heaven,
Till you have the stock of piety or sin.

When your stock is exhausted.
Will you not be exterminated ?.. ?
Then to which place you wander ?
With whom shall you wander?....?

Alas ! O, son, imagine that situation.
Which is devoid of any destination.
True, it is the life's greatest riddle
Which at first you must have to meddle.

I have examined all the benefits.
Which the followers blindly enlist.
None offers any such solution
Like that of the Kuldharma Sanatan
....

Because :—

In the sons own Gene-Ism.
Son can have the vision.
Son can have conversation.
With his Manes as Incarnation.

———

प्रार्थना

अतः हे, महाशक्तिमान !
मेरे पिता के शुद्ध खून के,
मेरे पवित्र शुद्ध शरीर को,
तेरे स्पर्श का अनुभव मिले ।
तेरे दैविक कुल के देवों को,
मेरे नैसर्गिक कुल के पित्तरों को,
मेरे पवित्र रसोई का भोग मिले ।
मेरे पवित्र घर के रसोंई में,
पित्तरों के संग देवों के आने मे
मुझको हर दम आभास मिले ।
मेरे पवित्र घर में आने वाले,
कुल पुत्र कुल पुत्रियों को
पवित्र धाम का आनन्द मिले ।
मेरे पवित्र आँगन में नित्
पग धरने वाले आगन्तुकों को
मेरे पवित्रता का सुगन्ध मिले ।
जिसमें ऐसी चैतन्यता,
मुझमे सदा कायम रहे,
वैसी तेरी कृपा मुझे सदा मिले ।

हरि ओम हरि ओम हरि ओम

———

मांग

अतः हे महाशक्तिमान ! (हे, सींगवोंगा)
मेरे घर के, मेरे कुलके, जन्म चक्र मे,
हमेशा के लिए
पुस्त दर—पुस्त—के पुत्रों में,
शुद्ध पिताओं के शुद्ध खून का संचालन होता रहे।
और पुत्र—दर—पुत्रों में,
पिता, परम पिता महानों के प्रति
पूजा की भावना का
अवतरण होता रहे
ऐसी कुलाचार का सिलसिला ही
मेरे कुल में हमेशा चलता रहे।

....

अतः हे, महाशक्तिमान !
उनके चाहे, जो भी धार्मिक मान्यताएं हों।
उनके चाहे जो भी आध्यात्मिक मान्यताएँ हों।
उनके चाहे जो भी तत्व ज्ञान की मान्यताएँ हों।
उनके चाहे जो भी समाजिक मान्यताएँ हों।
उनके चाहे जो भी कौमी मान्यताएँ हों।
लेकिन पवित्रता के विना तो
किसी को दैविक फल की कुछ भी संभावना नहीं है।
पवित्र शरीर के अन्दर
पवित्र मन के पवित्र विचारों के विना तो
किसी को दैविक फल की कुछ भी संभावना नहीं है।

—:—

हे, महाशक्तिमान !
हे, महादेव के देव।
तेरे विशेष अंश के दूत,
जब शरीर में प्रगट होते हैं,
तब विलक्षण गुणों के कारण
अवतारी, पैगम्बर ईश्वर—पुत्र
इत्यादि नाम कहे जाते हैं।
समय आने पर जब शरीर त्याग जाते हैं
तब सदा के लिए वे उसी एक स्थिति में नही रहते हैं।
वे तो फिर वापस सृष्टि कर्त्ता
महादेव में ही समा जाते हैं।
महादेवी में ही समा जाते हैं।
इसलिए मुझे भ्रम को त्यागना होगा
और मुझे ऐसा ही समझना होगा
तेरी प्रसारित शक्ति वापस सिमट गई।
(your extended power has contracted)

....

तेरी वैसी शक्ति ही मुझमें प्रसारित हो।
तेरी वैसी कृपा ही मुझमें अवतरित हो।
और मेरे पुत्र-दर-पुत्रों में संचालित हो।
इसके लिए मैं अपना ध्यान सदा तुझपर पहुँचाता हूं।
मेरे पित्तरों वो पित्तर महानों को तेरे साथ ही पूजता हूं।

—:—

अतः हे, महाशक्तिमान !
अब मैं न किसी नाम का भजन करूं।
अब मैं न किसी रूप का हामी भरूं।।
मैं तो तेरे रूप रहित का ध्यान करूं।
मैं तो तेरे नाम रहित का नमन करूं।।
मेरे माता पिता का जीव तेरा ही अंश है।

उनसे आकर्षित मेरा जीव तेरा ही अंश है ।।
मेरे आने का कारण वे ही दो अंश हैं।
जीने में मेरा तारण वे ही दो अंश हैं ।।

ऐसी ज्ञान से तेरी अंशों का मैं पूजा करूँ ।
उनके साथ ही तुझे भी मैं अर्पण करूँ ।।

ऐसी भावना में पुत्र-दर-पुत्र पले ।
मेरे कुल में ऐसा ही सिलसिला चले ।।

मेरे घर में जन धन सुख में पले ।
पशु धन अन्न धन भी भरपूर मिले ।।

इनसे तेरे कुल का सेवा होता रहे ।
जिससे मेरा कुल भी सुख पाता रहे ।।

मैं तेरा सेवा करूँ और तु मेरा करे ।
परस्पर की सेवा में कुल पला करें ।।

अब मैं न किसी नाम का भजन करूँ ।
अब मैं न किसी रूप का हामी भरूँ ।।

हरि ओम तत्सत्

—:—

हे, महाशक्तिमान !
हे, महाकाल !

प्रकृति से परे जिस प्रकाश रूप में तू है।
वही तेरा ताप रहित प्रकाश की स्थिति है।
वही तेरा सूक्ष्म से सूक्ष्म पूर्ण की स्थिति है।
और वही स्थिति तेरा परम स्थिति है।

उस ताप रहित प्रकाश रूप में तू विस्तृत (फैले हुए) गन्ध, स्वाद, शब्द, रंग वो स्पर्श के परम सूक्ष्म, परम पवित्र स्थिति में है इसी कारण ही कण-कण में भगवान कहे जाते हैं।

सूक्ष्म से भी सूक्ष्म उन विस्तृत. परम पवित्र वस्तुओं के संयोग (proportionet) से घनीभूत (condensed) होकर तेरा ताप रहित प्रकाश का अंश रूप, जब तापयुक्त प्रकाश के, प्रकृति के स्थूल पंच तत्वों के संयोग से घनीभूत होकर, रूप में उतरता है, याने अवतरित होता है, तो वह तापयुक्त प्रकाश के प्राकृतिक माँ के रक्त श्राव से पवित्र की हुई मंच (कोख) पर ही उतरता है। यही तेरा परम रहस्य है।

लेकिन कितने ही लोग इस रहस्यमयी तेरी प्रकृति को समझ पाते हैं। कितने ही लोग तेरी इस गुप्त से भी गुप्त गुण को परख पाते हैं। पर तेरी ही कृपा से मैंने तो परख लिया है।

....

तेरी इस गुण को, तेरी इस प्रकृति को स्वभाविक अगर नही कहा जाए, तो क्या कहा जाए ?

मैं तेरी इस स्थिति का स्मरण करूँ।
मैं तेरी इस स्थिति का नमन करूँ।

और तेरी इस स्थिति के उपयुक्त मंत्र (क्रीं) का
तेरे ही संबोधनार्थ सदा जाप करता रहूँ।

———

हे महाशक्तिमान ! हे, महाकाल !

परलोक (स्वाहा लोक—स्वर्ग लोक) में तेरी दैविक सृजन, और इस लोक में, तेरी नैसर्गिक सृजन का कारण, केवल इच्छा है, ज्ञान है, क्रिया है।

तेरी स्वभाविक दैविक इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया का प्रभाव, नैसर्गिक दम्पति पर, कृपा (grace) के रूप में अनायास ही पड़ता है।

वैसा प्रभावित, नैसर्गिक दम्पति के संयुक्त प्रबल, इच्छा-ज्ञान एवं क्रिया के फलस्वरूप, उनके मिलन से, कोख में जुगल विन्दुओं के उत्पन्न होने के बावजूद भी तेरा अंश शक्ति (अंश काल—Speck of power) कोख में स्थित दम्पत्ति के जुगल विन्दु में तबतक प्रवेश नहीं करता है, जब तक वह पवित्र मंच नहीं पाता है।

इसी कारण ही, हे, महाशक्तिमान ! तू नैसर्गिक नारी शरीर को, शुद्धि के लिए रक्त श्राव (monthly) कराता है। और मासिक परिशुद्ध होने पर ही नारी शरीर में तेरे अंश शक्ति के आने का, मंच तैयार होता है।

दम्पति के पवित्र जुगल विन्दुओं में, तेरे सूक्ष्म अंश शक्ति के प्रवेश होने पर ही, मिश्रित विन्दु बनकर, चित्त का निर्माण पूरा हो जाता है। अन्यथा नही।

उसी से प्रमाणित होता है, कि तू और तेरा अंश शक्ति, मात्र पवित्रता के द्वारा ही आकर्षित होने वाला है।

इसी कारण ही हे, महाशक्तिमान ! सद्गुणी सुन्दर पुत्र एवं पुत्री के पाने के लिए दम्पति में पवित्रता का अत्यंत ही आवश्यकता है।

ऐसी हालत में पवित्रत्तम ताप रहित, अदृश्य मण्डल से, पवित्रत्तम ताप-युक्त दृश्य मंडल के गुप्त मंच में; याने, आकाशीय पवित्रत्तम से, आवासीय (body) पवित्रत्तम में, आने वाले तेरे अंश शक्ति को, हे महाशक्तिमान, वही अच्छी तरह जान सकते हैं, वही अच्छी तरह परख सकते हैं। जो पवित्रत्तम हो।

क्योंकि चित्त रूप में जब तू पवित्र मंच पर ही उत्तर सकता है, तो विवेक ज्ञान रूप में भी, तू पवित्रत्तम शरीर पर ही उत्तर सकता है।

यह तेरा गुप्त से भी गुप्त गुण मैं जान गया।

यह तेरा गुप्त से भी गुप्त प्रवृति मैं ताड़ गया।

....

अतः हे, महाशक्तिमान !

मैं तेरा अंश, तेरा ही भक्त, किस प्रकार किस सीमा तक अपने को पवित्र बनाऊँ, जिससे कि तेरे स्पर्श के अवर्णनीत आनन्द (Bliss) को मैं सदा अनुभव करता रहूँ।

और जिससे कि उत्तम कुलज्ञानी होकर, अपने शरीर सहित, आत्मा का (Protection)—रक्षा कर सकूँ। और आत्मा सहित शरीर को अमर कर सकूँ।

वैसी विवेक ज्ञान ही मुझमें सदा प्रवाहित होता रहे।

———

स्थिति

अतः हे, महाशक्तिमान ! हे पूर्ण शक्तिमान !

तपस्वियों के व्यक्तिगत, दैविक अनुभवों से यह बात स्पष्ट होती है, कि तेरी मुख्यतः दो ही स्थितियाँ हैं।

प्रथम—परम स्थिति है। पूर्ण स्थिति है।

यह रूप रहित, नाम रहित, समय रहित, सीमा रहित परम-आत्मा परः ब्रह्म की स्थिति है। विस्तृत और वृहद् स्थिति है।

दूसरा—चरम स्थिति है। सूक्ष्म से भी सूक्ष्म विस्तृत एवं वृहद के बौना (क्षूद्र) रूपों की स्थिति है।

यह पूर्ण सूक्ष्म का अंश सूक्ष्म रूपो को स्थिति है। याने परम सूक्ष्म चित्त से सूक्ष्म चित्त, आत्मा, जीव, भूत, प्रेत, इत्यादि रुपों की स्थिति है।

आदमी एवं जन्तु शरीरों के आत्मा रुपों की स्थिति है। और अवतारों, पैगम्बर एवं ईश्वर-पुत्र इत्यादि शरीरों के महान आत्मा रुपों की स्थिति है।

इस स्थिति का सूक्ष्म अंश (अंश प्रकाश) रूप प्राकृतिक तत्वों के संपर्क में आकर, घनीभूत रूप (स्थूल) शरीर धारण करता है; और शरीर रूप का समाज में नामकरण किया जाता है। और शरीर रूप के नाम के साथ ही आत्मा (चित्त अंश प्रकाश) रूप का भी नाम हो जाता है।

अन्यथा तेरे पूर्ण (विस्तृत) का यह (शरीर का) अंश (सूक्ष्म रूप, प्रकाश रूप, आत्मा) भी नाम रहित ही है। पर शरीर में ही सीमित रहने के कारण यह तेरा अंश, सीमित भी है। समय के बंधन में भी है।

इसलिए यह कहा जा सकता है, वरण वैसा है भी; किन्तु, पूर्ण रूप में स्वयं असीमित होकर भी अंश रूप में सीमित समय का सीमित रूप धारण करते हैं।

शरीर के नाम के द्वारा, आत्मा का भी नाम हो, जाने के कारण, शरीर के मर जाने पर भी, उस शरीर के नाम से, अहवान (नुतुमते वों गाए रे) करने पर, वह आत्मा (शरीर मुक्त सूक्ष्म अंश-जीव) सुनता है। और आहवान कर्ता

(केया तनिः) के निकट भी आ जाता है। और आने के आभास को आह्वान कर्त्ता (पुत्र) अनुभव करता है। यह सत्य है।

अगर ऐसा नही होता तो, अवतारी, पैगम्बर। (Incarnations) इत्यादि के शरीर नामों से पुकारने या आह्वान करने से क्या फायदा है ? उस नाम से प्रार्थना करने या चिंतन करने से ही क्या फायदा हैं ?

अतः यह शरीर रूप नाम से आह्वान (Invoke-or invitation with Low tone) कर पवित्र रसोई कोठरी में, पवित्र भोजन पानी का सखुवा पत्ता पर अर्पण करने पर, वह आत्मा संतुष्ट भी हो जाता है। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार शरीर रूप में, शरीर के, पवित्र भोजन करने पर, आत्मा भी संतुष्ट हो जाता है।

और उस शरीर नाम से ही, प्रति सुबह, प्रति शाम या हरेक समय हरेक भोज्य पदार्थ के सेवन करने के पहले आह्वान कर, अर्पण करने पर, वह आत्मा, सदा संतुष्ट हो खुश रहा करता है।

इसे पूजन कर्त्ता, अर्पण कर्त्ता, अपने आत्मा के द्वारा शरीर में अनुभव करता है। और उन्हें योग निद्रा में देख भी पाता है।

इससे उस नाम के उत्तराधिकारी पुत्र एवं पुत्र के परिवार को, मन में ऐसा लगता रहता है, कि वे मर कर भी, मानो उनके निकट ही है। और वे उनसे अपने को बहुत सुरक्षित, एवं संतुष्ट भी अनुभव करते रहते हैं।

अतः हे, आदिवासियो !

यही कारण है, कि आपके पौराणिक कुलाचार में, पुत्र के द्वारा, उनके पूर्वज कुल के पित्तर आत्माओं को, उनके नाम से आहवान कर, पूजा सेवा के लिए, पवित्र भोजन पानी एवं अन्य खाद्य पदार्थो के, अर्पण करने का यूक्ति संगत दैविक विधान है। उसे सही रीति से करने के लिए यूक्ति संगत दैविक आचार (Divine Conduct) कुलाचार है। जो पुत्र के सुख शांति के साथ इस संसार में जीने का उत्तम आधार है। जिसका पूर्वोत्र, यही कारण है।

परिणाम

पर गैर कुलाचारियों को आत्मा के गुणों का, आत्मा के प्रवृत्ति का कुछ भी पता नहीं चलता है।

परिणाम स्वरुप, पुत्र के द्वारा पित्तर आत्माओं को पवित्र रसोई के पवित्र भोजन पानी अर्पण करने के सम्बन्ध में, अक्सर यह शिकायत किया जाता है कि अर्पित की गई भोजन एवं अन्य वस्तुएँ तो जहाँ के तहाँ रह जाती है, तो वे खाते कैसे हैं ?

इसके अलावे वे खाते दिखाई देते भी तो नहीं है, तो वैसे हालत में उन्हें अर्पण करने से क्या मतलब है ?

मतलब तो बहुत बड़ा है। अपरिमित है। यह बात सही है कि आत्माएँ खाते दिखाई नहीं देते है। ये तो आत्माएं (जीव हैं। मृत शरीर के शरीर रहित आत्माएं हैं। अदृश्य हैं। जीवित शरीर का (शरीर युक्त) आत्मा भी तो दिखाई नही देता है तो मृत शरीर का (शरीर मुक्त) आत्मा भला किस प्रकार साधारण (संसारी) व्यक्ति को दिखाई दे सकता है ?

इस सम्बन्ध में वैसे शिकायत करने वाले, गैर-कुलाचारियों से मैं यह जानना चाहता हूँ, कि अवतारी (Incarnation, Prophet, Son of God) के नाम का दम भर प्रार्थना करने और दम भर चिल्लाने के बाद भी जब वे निकट आते दिखाई नही देते हैं, या दूर से हो जाते दिखाई नहीं देते हैं, तो वैसे परिणाम रहित प्रयासों में जिंदगी को खपाने से क्या फायदा है ?

शिकायत करने वाले अभी जीवित हैं। वे जीवित हैं क्योंकि उनके शरीर में अभी आत्मा विद्यमान है। अब सवाल उठता है कि शरीर को जीवित रखने के लिए शरीर के मुँह से जब वे खाते हैं तो क्या उनके शरीर का आत्मा, अपने भी मुँह से खाते हैं ? क्या खाते दिखाई देते हैं ?

अगर नही तो बतावें, कि उनका शरीर सहित आत्मा, भोजन पानी पाकर किस प्रकार संतुष्ट हो जाता है ?

हे महाशक्तिमान !

कुलाचारियों के प्रति गैर-कुलाचारियों की वैसी बेतुकी शिकायत तेरे

गुणों के, तेरे प्रवृतियों के, ज्ञान से रहित, नादानी का ही परिणाम है। मैं यहाँ उन्हें यह सलाह देता हूँ कि वे तेरे सम्बन्ध का ज्ञान हासिल कर, अपने भ्रम को दूर करें।

यह बात सही है, कि साधारण (संसारी) स्थूल शरीर की आँखें, स्थूल शरीर से रहित, सूक्ष्म शरीर (जीव आत्मा) को देख नही सकती है। उसके अपने निकट आने के आभास को अनुभव नही कर सकती है। तब उसका मतलब यह नहीं है कि जीव आत्मा नहीं (none-existent) हैं।

उनके (जीवात्मा) के होने का, निकट आने का, तो केवल कुलयोगी शरीर ही अनुभव कर सकता है। और कुलयोगी स्थूल शरीर के आत्मा की सूक्ष्म आँखे ही शरीर रहित जीवात्मा को देख भी सकता है।

इसके अतिरिक्त यह बात भी इसी प्रकार ही सही है, कि शरीर रहित सूक्ष्म आत्माएँ, पवित्र रसोई के पवित्र भोजन पानी का भोग अर्पण पाकर अदृश्य तौर पर ही सतुष्ट रहते हैं। जिसे अर्पण कर्त्ता पुत्र एवं उनके परिवार के लोग ही अनुभव कर सकते हैं।

इसके अलावे पित्तरों को, पवित्र भोजन पानी के अर्पण का परिणाम अर्पण कर्त्ता पुत्र के घर में सुख शांति एवं जन धन, पशु धन एवं अन्न धन के उत्तरोत्तर वृद्धि में ही परिलक्षित (visible) होता है। जिसे कुलाचारी पुत्रों तो क्या गैर-कुलाचारियों के स्थूल आँखों से भी देखा जा सकता है।

इसके अलावे पुत्र को योग निद्रा में, पित्तर आत्माओं का दर्शन भी होता रहता है। इससे उनके (पित्तर आत्माओं के) प्रत्येक रात घर में आते रहने का आभास भी पुत्र को मिलता है।

परिणाम—कुलाचारी पुत्र का इन अनुभवों का आनन्द, परिवारिक जिंदगी के आनन्द में चार चांद लगा देता है। और उनके (पित्तरों के) हो असर से, कठिन से भी कठिन परिवारिक काम भी आसानी से हो जाता है।

यही नहीं हानिकारक जन्तुओं, विषैली साँप, बिच्छुओं, खूँखार जंगली जानवरो, पिशाच इत्यादि के रास्ते में होने या घर में आने का संकेत भी पहले ही प्राप्त हो जाता है। इससे कुल पुत्र अपने तथा अपने परिवार के बचाव के लिए सचेत हो जाता है।

तो इसी तरह के अनेक अनायास, अदृश्य उपलब्धियां, क्या पित्तरों के पवित्र भोजन पानी के अर्पण स्वीकार करने का प्रमाण नहीं है? और अर्पण से संतुष्ट होकर सुख शान्ति का आशीर्वाद देने का प्रमाण नहीं है?

कुलाचार की सारी बातें सही हैं। आज ही नहीं वरन कई युगों से सही रही है और सदा सही रहेगी।

इसी कारण आदि युग के आदिग संस्कृति में पल रहे, सिंहभूम जिला के कोल्हान क्षेत्र के कोलों (हो) का आचार उत्तमों में उत्तम आचार-कुलाचार है। जो संसार के कई लोगों के, कई परिवर्तनों के बावजूद भी शुद्ध रूप में ज्यों का त्यों "हो" लोगों के रीति रिवाजों में कायम है।

यह क्या—हो लोगों के परम गौरव की बात नहीं है? वरन, मैं तो कहूँ कि कोल (हो) लोगों के समक्ष तो, संसार का कोई अन्य गौरव भी फीका ही फीका है।

क्योंकि—कुलाचारी हो लोगों के गुप्त आदिग संस्कृति (Kitchen Culture) के जैसा संस्कृति अन्य किसी को नही है।

नाम

हे महाशक्तिमान ! हे पूर्णशक्तिमान !

तेरे रूप रहित, नाम रहित, असीमित, परम स्थिति को, तेरे ही अंश के चरम स्थिति के, सूक्ष्म चित्त रूप में घनीभूत पंच तत्वों के शरीर के द्वारा (याने बौना रूप, क्षुद्र ब्रह्माण्ड रूप) के द्वारा ही अनुभव किया जा सकता है।

किन्तु तेरे उपरोक्त दो स्थितियों के विभिन्न धार्मिक, आध्यात्मिक, एवं तत्विक नामों (चित्त, रूह Spirit) के अलावे संसार में ईश्वर, अलाह, खुदा, God नाम भी पुकारे जाते हैं। ये नाम अक्सर उच्चारण किए जाते हैं।

एक तरफ तेरे ही अंश के सम्बन्ध में यह तो मालूम है कि चित्त, रूह एवं spirit तेरे चरम स्थिति के नाम हैं। और दूसरी तरफ यह भी मालूम है कि तेरे पूर्ण स्थिति याने परम स्थिति में, तू नाम रहित है।

ऐसे में, ईश्वर, अलाह, खुदा God नाम तेरे सतत परिवर्त्तन (evolution) के क्रम के किस स्थिति के नाम हैं? उच्चारण करने वालों के

द्वारा व्याख्या नहीं किये जाते हैं। वे शायद अपने अनुभव से जानते नहीं हैं। वे शायद नाम केवल सुनकर ही सीखे हुए हैं।

अंश रूप में, तेरे चरम स्थिति में परिवर्त्तन के क्रमिक स्थितियों का नाम जब चित्त, आत्मा, (रूह spirit) जीव, भूत, प्रेत एवं प्रभू है, और परम स्थिति मे तू नाम रहित है, तो ऐसे में तेरे चरम स्थिति के पहले के, याने ऊपर के स्थिति एवं परम स्थिति, के बाद के, याने नीचे की स्थिति के बीच का कोई एक स्थिति, याने चरम एवं परम स्थितियों के बीच का कोई एक स्थिति, का ही नाम ईश्वर, अलाह, खुदा God हो सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य तो नहीं हो सकता है।

यह मेरा अनुमान मात्र ही है। क्योंकि इस तरह के नामों के स्थितियो का तू कुछ भी तो संकेत नही देते है। इसी कारण ही पौराणिक ऋषियों एवं मुनियों ने तुझे पूर्ण स्थिति में परम शक्तिमान, परम आत्मा, परःब्रह्मः का ही नाम लिया है। अन्य नाम नहीं दिया है। और चरम (अंश) स्थिति में, चित्त, आत्मा, जीव, भूत, प्रेत एवं प्रभू नाम ही दिया है। अन्य नाम नहीं दिया है।

अतः इससे प्रमाणित होता है, कि ईश्वर, अलाह, खुदा एवं God नाम भिन्न धर्मो के धार्मिक नाम हैं। साधारण शारीरिक मन एवं बुद्धि के नाम हैं। तपस्या से अर्जित, आत्मिक अनुभव के आत्मिक मन एवं बुद्धि के नाम नही है।

केवल इतना ही है, कि ये बहुत पुराने नाम हैं और लोगों के बोलियों में प्रचलित नाम हैं। पर शायद योगियों के ध्यान के लायक नाम नहीं है।

....

हे महाशक्तिमान ! हे पूर्णशक्तिमान !

फिर यह भी तो बात है, कि अगर यह भी मान लिया जाए, कि ईश्वर, अलाह, खुदा, God नाम तेरे परम स्थिति, (विस्तृत वृहद् स्थिति—रूप रहित, नाम रहित, सीमा रहित एवं समय रहित स्थिति) के ही नाम है, तो वैसी हालत में तेरी ही चरम स्थिति, शरीर युक्त स्थिति (embodied state) के नाम, चित्त, आत्मा, रूह, Spirit नामों के अतिरिक्त नाम और सही नाम,

अंश ईश्वर, अंश अलाह, अंश खुदा एवं minigod नाम क्यों नहीं रखा जा सकता है ? या क्यों नही कहा जा सकता है ?

क्योंकि परम स्थिति में, विस्तृत वृहद् ब्रह्माण्ड की स्थिति में, जब तू ही, या तेरा ही नाम परमात्मा, एवं परमेश्वर कहा गया है, तो चरम स्थिति में, सीमित क्षूद्र ब्रह्माण्ड (स्थुल शरीर रूप) की स्थिति में, तेरे ही अंश (आत्मा) को आत्मेश्वर एवं चरमेश्वर क्यों नही कहा जा सकता है ?

ऐसी हालत में कुलाचार के सिद्धान्तों के मुताबिक, पहले खूद अपने, और इसके बाद अपने पिता, तथा अपने वंश वो अपने, कुल के पित्तर महानों के आत्माएं या जीव आत्माएं; उत्तराधिकारी पुत्र के लिए आत्मेश्वर, चरमेश्वर, चरम अलाह, चरम खुदा एवं mini god अगर नही है तो क्या है ?

और पिता तथा महान, पूर्वज (पहले जन्मे) होने के कारण कुल भक्त कुल योगी पुत्र के लिए प्रथम चरण के या आरंभिक चरण के, पूज्येश्वर, वंशेश्वर एवं कुलेश्वर अगर नही हैं तो क्या है ?

फिर पुत्र भी पिता बनकर अपने पुत्र-दर-पुत्रों के लिए प्रथम पूज्येश्वर, वंशेश्वर एवं कुलेश्वर अगर नही होंगें, तो क्या होंगे ?

फिर इसी तरह पिता बनते जाने वाले पुत्रों के उतरोत्तर क्रम में, हरेक पिता अपने पुत्र के लिए प्रथम पूज्येश्वर, वंशेश्वर एवं कुलेश्वर अगर वही होते जाएंगे, तो क्या होतें जाएंगे ?

और पिता बनकर पुत्र जन्माने के महान कल्याण कारी, कार्य के लिए भी, पुत्र के द्वारा, अपना पिता प्रथम पूज्येश्वर अगर नहीं होंगे तो क्या होंगे ?

और पिता के प्रति कृतज्ञता का ऐसा ही क्रम, सही धार्मिक क्रम, कुलाचारी कुलधर्म क्रम उत्तमों में उत्तम अगर नही होंगे तो क्या होंगे ?

इसी तरह निज कुल के प्रति, निज वंश के निज पिता के प्रति कृतज्ञता का, पुत्र-दर-पुत्र के द्वारा अनुशरण करते हुए, पिता एवं पिता महानों को, भोग अर्पण करना ही कुलाचार है। जो सब आचारों में उत्कृष्ठ आचार है।

———

पूजा अर्पण

अब हमें यहां सोचना है, कि परम (Supreme) के चित्राकार क्रमिक विकासों (continuous cyclic evoluttion) में इश्वर, अलाह, एवं God स्थिति (state) का जब पता नही है तो इन्हीं नामों के आगे, परम शब्द जोड़कर, क्यों नही परमेश्वर, परम अलाह, नामों से पूकारा जाए ? और इस प्रकार क्यों नही परम (Supreme) स्थिति का ही पूजा किया जाए ?

जिससे कि पूजा बीच के ही, याने परम के ही नीचे के स्थिति (stage) में ही नही अटक कर सीधे परम तक में ही पहुँच जाए। यह सही है क्योंकि हमें पूजा बीच में ही अटकाना अच्छा नही है। सही स्थिति (परम स्थिति) तक ही पहुंचाना अच्छा है। क्योंकि पूजा, प्रार्थना, पढ़ना अगर बीच में ही अटक जाए और परम पूज्य तक नहीं पहुँचे, तो परमेश्वर, परम अलाह एवं Supreme God याने कुल मिलकर एक नाम परम (Supreme) की कृपा पाने की किस प्रकार आशा की जा सकती हे ?

सोचिए, खूद ही विचारिए।

इसी प्रकार ही पिता एवं पितर गणों को, परम के क्रमिक विकास के, परम का ही अंश होने के कारण, चरमेश्वर, चरम अलाह एवं mini god समझकर, या मानकर, उनके ही शरीर का नाम उच्चारण करते हुए, पुत्र के द्वारा, परम के साथ ही क्यों नही पूजा की जाए ? याने चरमेश्वर के नैसर्गिक कुल के साथ ही परमेश्वर के दैविक कुल का क्यों नही पूजा की जाए ?

क्योंकि ऐसे में कोई छूटते नही हैं। और पूजा में किसी का छूटना पूजा अर्पण ही दोषपूर्ण हो जाना है।

....

इसके आगे यह भी सोचना है, कि जब सारो सृष्टि, परम पिता परमेश्वर, परम अलाह, Supreme God याने कुल मिलाकर एक नाम परम (Supreme) का है, तब सारा खाद्य पदार्थ ही उन्ही के सृष्टि का है।

ऐसी हालत में, उनके (परम के) ही सृष्टि के वस्तुओं का, अंश आत्मा के शरीर रुप, पुत्र के द्वारा, परम के अनुमति के विना, किस प्रकार उपयोग किया जा सकता है ? जो अनुमति के बिना ही उपयोग करता है, वे निश्चय ही परम के चोर हैं।

परम का अनुमति लिए बिना, तो पुत्र के द्वारा खाद्य पदार्थों का सारा उपयोग ही दोषपूर्ण हो जाता है। अनुचित हो जाता है।

और तो और, परम के अनुमति के विना पुत्र को फूल तोड़ना तक अनुचित है। सोचिए तो, उसको फूल तोड़ने का क्या अधिकार है ? फूल फुलाने का बात ही छोड़ दीजिए, क्या वे फूल को अपने रंग से रंगीन बना सकता है ?

अगर पुत्र इसे समझ सकता है तो चरम सेवक (पूजारी) के रूप में, कुल भक्त के रूप में, पवित्र रसोई के पवित्र भोजन पानी को, प्रथम चरमेश्वरों के साथ परमेश्वर को अर्पण करना चाहिए और अर्पण के बाद बचा भोजन को प्रसाद के रूप में सेवन करना चाहिए। और अनुमति के बाद ही फूल भी तोड़ना चाहिए।

जो पुत्र केवल खाने के लिए ही खाता है, याने जो पुत्र अर्पण अनुमति के बिना ही भोजन पानी का सेवन करता है, वे निश्चय ही अपने कुल के चरमेश्वरों सहित, देव कुल के परमेश्वर याने सम्पूर्ण कुल के कुलेश्वरो का एवं कुलेश्वर का तिरस्कार करता है। इस प्रकार वे दोषी हैं। और परम (supreme) के दण्ड के भागी हैं।

यहीं पर आप मिलान कीजिए, कि एक खाने के नाम पर केवल खाने वाले साधारण कुलहीन पुत्र और एक खाने के पहले अर्पण कर खाने वाले कुल भक्त (कुलीन) पुत्र में क्या अन्तर है। कौन दोषी है। और कौन निर्दोष है।

....

हमारा परिवर्त्तन होते रहता है। क्योंकि चरमेश्वर (आत्मा—अंश शक्ति) ही परिवर्त्तन शील है। उनका जगत (movement) है। इसी कारण ही हम बचपन से जवानी और तब बुढ़ापा को पहुँचते हैं। और मियाद पूरा होने पर शारीरिक रूप से मर जाते है और मरकर अपने पुत्र के लिए हम चरमेश्वर की स्थिति में पहुंचते हैं। और जल्दी या कुछ विलम्ब से, भूखे-प्यासे या सन्तुष्टी से दण्ड पाकर या आशीर्वाद पाकर, रोते हुए या हँसी-खुशी, हम परम (Supreme) के निकट ही पहुँचते जाते हैं।

क्योंकि ये सारी सृष्टि उन्हीं की है। उनके सृष्टि का गुण परिवर्तनशील है। और इस परिवर्तनशील सृष्टि में हम, आप (पुत्रों) का जगत है। इसी जगत (movement) में हरेक पुत्र-पिता बनकर, मरने के बाद, चरमेश्वर की स्थिति से गुजरते हुए परमेश्वर के निकट ही पहुंचते जाते हैं। रोते हुए या हँसते हुए परमेश्वर में विलय होने के लिए परमेश्वर के निकट पहुंचते जाते हैं। इसके सिवाय हमारा (हम पुत्रों का) अन्य नतीजा होने का इस सृष्टि में, इस जगत में कोई विकल्प नहीं है।

यहीं पर आप मिलान कर लीजिए कि इस सृष्टि के परिवर्तन में इस जीवात्मा (चरमेश्वर) के जगत में, एक चोर, दुर्जन जो अर्पण अनुमति के बिना खाने के दोषी हैं, कुल विहीन पुत्र हैं। और एक सज्जन जो अर्पण अनुमति के बाद ही खाते हैं, कुलीन पुत्र हैं। दोनों में परमेश्वर के निकट कौन किस प्रकार पहुंचते होंगे ?

कुल विहीन पुत्र के सारे पित्तर, भोग विहीन और गृह विहीन पूर्वज पित्तर यत्र तत्र, भुखे प्यासे, रोते विलखते किस प्रकार भटकते होंगे; सोचने की बात है।

कुल विहीन होने के कारण और इस प्रकार अर्पण बिना खाने के कारण, परमेश्वर जो भी दंड देते हों, यह एक अलग बात है।

मगर यहाँ आप खुद ही ध्यान कीजिए कि अपने, मौरूसी घर से, या अपने ही नव-निर्मित घर से परमेश्वर में विलय होने, तक की लम्बी यात्रा; क्या—हमें कुल विहीन हो, भूखे प्यासे, रोते विलखते तय करना चाहिए ?

परम की ही कृपा से, मात्र एक कारण—माता पिता के कारण—पैदा होकर, सयाना होने पर, माता-पिता को, अर्पण विहीन, भुखे प्यासे, रोते विलखते परमेश्वर तक यात्रा करने देना क्या-पुत्र के लिए उचित है ?

ऐसे में ही लोगों के निज कुल के पित्तरों के साथ देव कुल के देवों का पवित्र भोजन पानी का पूजा अर्पण के बाद ही खाने वाला, कोल पुत्र के, कुलेश्वर (परमेश्वर) के प्रति, दैविक व्यवहार को मिलान करके देखिए।

वे कोल पुत्र खुद, अ र उनके पित्तर गण, परमेश्वर (कुलेश्वर) में विलय

होने तक की लम्बी यात्रा अर्पणों से संतुष्ट हँसते गाते अगर तय नहीं करेंगे तो कैसे करेंगे ?

अतः हे, कोल पुत्रो ! आपका कुलाचार हर दृष्टिकोणों से उत्तम है। उत्कृष्ठ है। इसका आप हमेशा पालन करें।

— : —

ध्यातव्य—परमेश्वर एवं कुलेश्वर शब्दों में अंतर इस प्रकार है।
साधारणों (कुल विहीनों) के लिए—परमेश्वर है
विशिष्ठों (कुलीनों) के लिए—कुलेश्वर है
और सबके लिए—पर : (Supreme) शब्द है।

कुल रीति

हे महाशक्तिमान ! हे पूर्णशक्तिमाम !

अब यह बात स्पष्ट हो गई है कि तेरी ही पूर्ण स्थिति का नाम ईश्वर, अलाह, God है। जिसे परमेश्वर कहते हैं।

फिर इसमें तनिक भी संदेह नहीं है, कि तेरी ही एक अंश स्थिति का नाम चित्त, आत्मा, रूह, Spirit है। जिसे चरमेश्वर कहते हैं।

तो ऐसे में दम्पति के सम्बन्धों में :—

पत्नि के लिए पति ही ईश्वर है। चरमेश्वर है। पति के लिए पत्नि ही ईश्वरी (देवी) है, चरमेश्वरी है।

उसी प्रकार अन्य शब्दों के सम्बन्ध में :—

बीबी के लिए मियाँ ही अलाह है। चरम अलाह है। मियाँ के लिए बीबी ही अल्हीन है। चरम अल्हीन है।

Wife के लिए husband ही god है, mini god है।

Husband के लिए Wife ही goddess है, mini goddess है।

क्योंकि दम्पति के हैसियत से यही दो शरीर सबसे निकट में है। और उन दो शरीरों के यही दो आत्माएँ रूह, Spirit सबसे निकट है।

ऐसी हालत में दम्पति प्रेम भाव से, क्यों नहीं एक दूसरे का भक्ति करे! क्यों नहीं एक दूसरे का पूजा करे! क्यों नहीं एक दूसरे का वन्दना करे!

पति की मृत्यु पहले होने पर पत्नि क्यों नहीं पति आत्मा को देव (ईश्वर) मानकर जिंदगी भर उनको पूजा करे! उनके नाम से भोग अर्पण करे!

और पत्नि की मृत्यु पहले होने पर, पति क्यों नहीं पत्नि आत्मा को देवी (ईश्वरी) मानकर जिंदगी भर उसकी पूजा करे! उनके नाम से क्यों नहीं भोग अर्पण करे!

और इस प्रकार नित्य शाम सवेरे, पवित्र भोजन पानी के भोग अर्पणों से वे परस्पर के आत्माओं का क्यों नहीं सेवा करें! और इस प्रकार वे परस्पर को क्यों नहीं संतुष्ट रखें!

अगर वे नर-नारी, इतना निकट के संबंधों—दम्पति के संबंधों में एक विस्तर पर सोकर, लेटकर एक साथ चलकर, एक साथ बैठकर भी एक दूसरे का पूजा नही करते हैं, तो यही समझा जाएगा कि, उनका केवल शारीरिक संबंध था। आत्मिक संबंध नहीं था।

और शारीरिक संबंध (bodily relationship) तो केवल जानवरों का ही हुआ करता है। आदमियों का नहीं। अगर आदमी होकर भी जानवरों का ही अनुशरण करते हैं, तो वे निश्चय ही आदमी रूप में जानवर हैं। वे इस आदमी रूप के पहले के रूप में निश्चय ही जानवर के रूप में थे। अन्य प्रकार नहीं थे।

परमेश्वर की कृपा से, पुत्र एवं पतोहू जब एक समान सुख से जीवित हैं, तो वे अपने जन्म देनेवाले, माता पिता एवं माता-पिता के सिलसिले के पूर्वज पितर आत्माओं (चरम पित्तर ईश्वर, चरम पित्तर अलाह manes mini god) को नाम से आह्वान कर, जिंदगी भर क्यों नहीं, पूजा अर्पण से सेवा करें!

परमेश्वर, परम अलाह, Supreme God के निकट पहुंचने तक के लम्बी यात्रा में, उन्हें हमेशा क्यों नही संतुष्ट रखें?

मात्र श्राद्ध कर्म काफी नहीं है या मात्र वर्षी काफी नहीं है। उनकी सेवा तो दैनिक सुबह शाम की पूजा अर्पणों के साथ होना चाहिए। क्योंकि उनकी यात्रा लम्बी है।

अगर दम्पत्ति वैसा नही करते हैं। केवल अपने मौज से खाते हैं। पितरों को पहले खिलाये बिना खाते हैं। तो यही कहा जाएगा कि वे दम्पत्ति जानवर का व्यवहार करते हैं। क्योंकि जानवरों को ही माता पिता के संबंधों का स्मरण नहीं होता है।

अपने ही से संबंधित आत्माओं की पूजा इसलिए जरूरी है, परस्पर की सेवा इसलिए जरूरी है, क्योंकि इसमें अपने ही सेवा की गुंजाइश है। अपनी ही पूजा होने की गुंजाइश है, अपनी बारी भी तो आएगी।

ऐसे में हरेक पुत्र, पतोहू का क्यों नहीं ऐसा ही ख्याल बने? इस तरह पीढ़ी-दर-पीढ़ी के पुत्र-दर-पौत्रों का वैसी ख्यालों का क्यों नहीं एक सिलसिला बने? और इस तरह क्यों नहीं अपने कुल का रीति रिवाज बने?

ऐसी ही अपनी परम्परा कायम करते जाने के लिए क्यों नहीं हरेक-माता-पिता गुरु बने? और पिता के जिंदगी भर के दैविक अनुभवों को प्राप्त करने का क्यों नहीं पुत्र उत्तराधिकारी बने!

———

वन्दना-वन्दों की

अन्दाज कीजिए कि इतने विशाल, अपरिमित, ब्रह्माण्ड में, आपके रिश्तेदार कौन हो सकते हैं?..... अपने निजी सम्बन्धियों के सिवाए, शायद और कोई नहीं।

तो अपने अकेले भिन्न धर्म का डफली बजाकर ही क्या होता है? या कुछ लोगों के गिरोह में शामिल होकर भिन्न धर्म का डफली बजाने से ही क्या होता है?

सहेली, सभी तो मौके के ही यार हैं। क्योंकि आखिर यह संसार केवल

सिलसिला का ही संसार है। पिता के बाद पुत्र—पिता के बाद पुत्र का ही सिलसिला है। इसके अलावे और कुछ नहीं है।

यह सही है कि इस सृष्टि में, हरेक नर-नारी, हरेक माता-पिता, हरेक पुत्र-पुत्री—ईश्वर, अलाह, God के ही वन्दे हैं। किन्तु वे एक सिलसिला पिता-पुत्र के सिलसिला के ही वन्दे हैं। अन्य नही है। इस कारण धर्म सिलसिला का ही धर्म, होना चाहिए। बगैर सिलसिला का धर्म नहीं होना चाहिए।

हरेक वन्दा अपने पिता वन्दा का ही पुत्र वन्दा है। तो सृजन के ही सिलसिले के पुनः सृजन के सिलसिले का वर्त्तमान पुत्र वन्दा अपने निकटतम संबंधों के श्रोत वन्दा (पिता वन्दा) ही पूजा, वन्दना क्यों नहीं करें! और उन्हीं के साथ ही, उन्हीं के श्रोतों के श्रोत वन्दों के साथ सुदूरतम श्रोत वन्दा (वन्देश्वर) की क्यों नहीं पूजा बन्दना करे?

स्मरण करें कि यहाँ तो रिस्ता वन्दों के साथ वन्दा का है। पिता वन्दा का पुत्र वन्दा, और पुत्र वन्दा का पिता वन्दा। और हरेक वन्दा (पुत्र) के वन्दों (पित्तरों) का वन्दा—परम बन्दा (परमेश्वर, परम अलाह Supreme God) है। इसके अलावे भी क्या कोई रिस्ता है।

तब भला बन्दो का वन्दा होकर, बन्दों का सेवा वन्दना, वन्दा नहीं करें? तो यह कैसा व्यवहार है?

Pan-Ism [सर्व-धर्म]

O, gentleman
O, gentlewoman
There is no question of Hindu or Muslim,
There is only the question of Father and son.
There is no question of Christian or Non-Christian,
There is only the question of Father and son.
However you may devise
Relationship can not be otherwise
Than Father and Son
And Father and Son
Think for the moment about the Creation
Think for the moment about the Re-creation
It is the play of Father and son
None else than Father and son
So think of your Pana-Ism, Own-Ism
Can it be otherwise than Gene-Ism ?

—:—

Note :— Own-Ism is Pan-Ism.
Pan-Ism is own-Ism.
स्वधर्म-सर्व-धर्म है।
सर्व-धर्म-स्वधर्म है।

Order (सिलसिला)

Please listen
O, gentle son
The World is of the Order
It is never of the Dis-order.
Father to son order.

And son to son order.
So the worship should be of the Order.
It should never be of the Dis-order.
Because by that all will be in order
And none will be in dis-order.

Please shake off your—false vanity
It is never useful for humanity.
Try to understand the celestial Order.
Try to understand your Earthly Order.

You imagine about the creation
But you personally see Re-creation
Unite the Celestial and Earthly Order
Through the line of Re-creational Orders.

Then worship a single Order
Which is your own genealogical Order.
Please never worship dis-order
Because you will be in dis-order

Please listen
O, gentle son

—

सिलसिला

अतः हे, महाशक्तिमान ! हे, पूर्ण शक्तिमान !

सिंहभूम जिला के कोल्हान क्षेत्र के कोलों के लिए यह कोई नयी बात नहीं है।

उनके लिए तो सृष्टि के आरंभ से ही तेरी परम स्थिति के आदित्य देव (celestial God) सींगवोंगा तू ही है।

उनके लिए तो फिर तेरी ही चरम स्थिति के तेरे ही शुद्ध अंश का चित्त, आत्मा, रुह, spirit रोवा, घरेलू देवता (House-hold-god ओवा:वोंगा) है।

उनके लिए तो तेरी ही परम और चरम स्थितियों के बीच (याने सींगवोंगा अण्डों: ओवा: वोंगा ताला रे) तेरे ही, सृजन के स्थिति के रूप, महादेव (मरंगवोंगा) है। और उनके साथ ही, महादेवी (बिन्दी एरा-जैर-हातुवोंगा — देशाउली) है। जिनके साथ, गांव के सभी कुल पित्तर सम्मिलित हैं।

अतः परम शुद्ध, परम पवित्र, हो कोलों के विश्वासों (faith) में तेरे हरेक स्थितियों, नीचे चरम में ओवा: वोंगा, बुढ़ी एरा को, हाड़म हो को, किलि आपू के किलि एरा को, उसके ऊपर मरंगवोंगा सहित बिन्दी-एरा, उनके ऊपर नागे एरा (अर्धनारीश्वर) और सबसे ऊपर परम में (आदि में) सींगवोंगा; की स्थितियों का नीचे से ऊपर और उपर से नीचे तक, आदि से अद्य (वर्तमान) और अद्य से आदि तक, आदिग से लाजि, घर से आँगन, देशाउली (छोटा कैलाश) से हेन्दे बुरू (बड़ा कैलाश) तक, और उसके बाद आसमान तक, याने आदिग से आसमान (सिरमा) तक, याने तापरहित प्रकाश से तापयुक्त प्रकाश (सिरमा रेन सींगवोंगा. ओते रेन नागे एरा) तक, आसमानी तत्व से प्राकृतिक तत्व तक, परम पिता से पिता तक के सारी स्थितिथों का धार्मिक, आध्यात्मिक एवं तत्व ज्ञान का, जितना स्पष्ट, जितना तर्क संगत विश्वास (faith) है, वर्णन नहीं किया जा सकता है। यही कहा जा सकता है, उनका वैसा विश्वास किन्हीं का नहीं है। आखिर कोलों का कुलाचार (Total conduct for the Total Divinity) है, न।

....

रूप रहित (परम—सींगवोंगा) के रूप (अर्धनारीश्वर—नागे) के सृजन के लिए, स्वतः बिभक्त दो रूपों (शक्ति—महादेवी—बिन्दी एरा, एवं शक्त:—

महादेव—मरंगबोंगा) के दैविक मिलन से ही, देवलोक (celestial World) दैविक कुल का आरंभ हुआ है। और वही दो रूप प्रकृति के संपर्क में मरंगबोंगा (महादेव) और विन्दी एरा (महादेवी) के मिलन से ही नैसर्गिक कुलों (वर्त्तमान कोलों के पूर्वजों के कुलों) का आरंभ हुआ है। प्रत्येक गोत्रीय (किलि) कुल पिता का सृजन, नैसर्गिक प्रथम प्रवर्त्तक पिता-माता (मरंगबोंगा-विन्दी एरा) से ही हुआ है।

इस तरह वर्तमान कोल परिवारों के लिए, उनके वंश के लिए, और उनके कुल के लिए, आपसी दैविक संबंध (mutual divine relationship) और तदनुसार आपसी परस्परिक दैविक सेवा (reciprocal divine service); उनके निकट अतीत से सूदूर अतीत के पिता, पिता महानों, एवं कुल पिताओं के सिलासिले में, सूदूर तम अतीतों के प्रथम प्रवर्त्तक, नैसर्गिक एवं दैविक कुलों के परम पिता से होकर सबके सृजन के श्रोत (The Source of All Creations) महाशक्तिमान (Supreme) विस्तृत ब्रह्म में ही अंत होता है।

दैव (Divine) के संबंध में कोलों का कितना सीधा, कितना साफ, चिंतन है, कहा नहीं जा सकता है। यही कहा जा सकता है, कि वैसा दूसरों के चिंतन में नहीं है।

फिर कोल पुत्रों के दैविक संबंधों का कितना सुन्दर, कितना सीधा, कितना महान ताँता (continuity) है? कोल पुत्रों के निःस्वार्थ दैविक सेवाओं का कितना सुन्दर, कितना महान ताँता है; वर्णन नही किया जा सकता है। यही लिखा जा सकता है कि वैसा दूसरों में नहीं है।

....

अतः हे, महाशक्तिमान! हे, उत्तम कोलों! आदि पुत्र का आदि गुरू—आदि पिता ही था। आदि पुत्र (दैविक पुत्र एवं नैसर्गिक पुत्र) ने कभी जब पूजा प्रार्थना एवं वन्दना किया था, तो अपने आदि पिता—माता का ही पूजा प्रार्थना एवं वन्दना किया था। इसके सिवाए तो, अन्य गुंजाइश नही है। उस समय, पं० पा० मौ०, नहीं थे। सृजन के प्रथम पुत्र को ज्ञान देने वाले आदि पिता ही थे। अतः यह अभी भी सत्य है, "कि जिनके गुरू कोई नहीं है, उनके गुरू तो आदि पिता (मरंगबोंगा-महादेव खूद हैं।

इसी कारण ही तो मैंने, आपको पहले ही यह कहा है कि—

पिता गुरू बने और पुत्र चेला
और चलता रहे यही सिलसिला
तेरी ही कृपा से हे, कुला-अकुला!
(कुला--महादेवी-अकुला-महादेव)
(मुंडा होन कुला होन)

अतः कोल पुत्रों के लिए, महादेव (मरंग बोंगा) सूदूर अतीत के नैसर्गिक कुलेश्वर है, और महादेवी (विन्दी एरा) कुलेश्वरी है। सब गोत्रों (किलियों) के कुलेश्वर—कुलेश्वरी हैं।

फिर अपने किलि के लिए प्रथम कुल पिता; किलि कुलेश्वर है, माता कुलेश्वरी है।

इसी प्रकार अपने गांव के निकट अतीत के प्रथम प्रवर्त्तक ग्राम वासी कुलपिता—अपने ग्राम के कुलेश्वर हैं। माता कुलेश्वरी है।

फिर सबसे निकट अतीत में, अपने पुनः सृजन के पिता, अपने ही लिए पित्रेश्वर है, और माता अपने ही लिए मात्रेश्वरी हैं।

फिर दम्पति के संबंधो में पत्नि के लिए पति ही परमेश्वर (देव) है। और पति के लिए पत्नि ही परमेश्वरी (देवी) है।

इसी तरह के कुल चक्र के, कुलाचार के, एवं कुलधर्म, के निर्मल पवित्र वातावरण में, कुलाचारी पुत्र जन्मता है, जीता है, और मरता है। पर कभी खोता नही है। कभी रोता नही है।

वही खोता है, वही रोता है, जो अपने उत्कृष्ठ पौराणिक से भी पौराणिक, परंपरागत कुलाचार को छोड़कर, वर्त्तमान के मनगढ़न्त तर्कहीन चमक दमक आचारों में बहक जाता है।

....

इस तरह वृहद् ब्रह्माण्ड के, संपूर्ण कुल के, विस्तृत प्रसार का दायरा,—आदि में सृष्टि कर्त्ता—परः ब्रह्म (सींगबोंगा) से आरंभ होकर, कुल प्रवर्तक—शक्तः महादेव (किलि हटिग मरंगबोंगा) एवं शक्तिः—महादेवी—पार्वती (बिन्दी एरा) से होकर उतरते हुए कुल पित्तरों के वर्त्तमान किलि कुल उत्तराधिकारी कोल

पुत्र में पहुंचता है। और फिर इन्हीं वर्त्तमान कोल पुत्र से ही वापस लौटने का सिलसिला आरंभ होकर उत्तरोत्तर ऊंचा ही ऊंचा उठता हुआ, सब स्तरों को पार करता हुआ, परम (सींगबोंगा) में ही समावेश पाकर अंत करता है। जहां से पहले सिलसिला का अवतरण आरंभ हुआ था।

कितना सुन्दर, कितना सीधा सिलसिला है। कहा नहीं जा सकता है। केवल यही कहा जा सकता है, कि वैसा दूसरों का नहीं है।

अतः कोल+हन (कोल—पुत्र) कोल्हान के कोलों (हो, मुंडा, संथाल, उरांव) को कुलाचारी ही होना चाहिए। अन्य प्रकार नहीं होना चाहिए।

कोल्हान क्षेत्र के बाहर, पूरे भारत के, वरन पूरे विश्व के आदिवासियों को भी, कुलाचारी ही होना चाहिए। अन्य प्रकार नहीं होना चाहिए।

क्योंकि—कोलों का कुलाचार जितना सुखदायक है; जितना शान्तिदायक है, जितना आनन्दायक हैं, उतना अन्य आचार नहीं है।

फिर कुलाचार अपने आत्म सम्मान को कितना ऊंचा उठा देता है, वर्णन नहीं किया जा सकता है। इसे तो अपने हृदय में मात्र अनुभव ही किया जा सकता है।

यादु

इस तरह अतः हे, महाशक्तिमान !

हे, महा यादुगर !

अपने स्थूल शरीर के स्थूल आँखों से और उनसे ही संबंधित अपने सूक्ष्म शरीर (आत्मा) के सूक्ष्म आँखों से, मुझे जो कुछ भी सामने दिखाई दे रहा है, वे सब कुछ, तेरे रूप परिवर्त्तन के ही लीला (play) है।

रूप रहित से सूक्ष्म रूपों में, कई सूक्ष्म रूपों से कई स्थूल रूपों में, आने (जन्मने) की, और फिर कई स्थूल रूपों से मृत्यु के पश्चात, सूक्ष्म रूपों में, पूर्ववत, यथा स्थिति वापस होने की, और फिर सूक्ष्म रूपों से भी रूप रहित (मूल आरंभिक श्रोत) में ही विलीन (लय) होने (अन्तिम आत्मिक मृत्यु)

की ये सारी लीला, तेरे रूप परिवर्त्तनों की तेरी अविरल (never ending) यादु है।

अतः तू लीला दिखाने वाले परम यादुगर (Supreme Magician) है।

पर मैं, यह जानना चाहता हूँ कि तेरी वैसी लीला कैसे गतिशील है ?....

इसके लिए परम पवित्र वातावरण में, मेरे कुल के तेरे ही सूक्ष्म रूपों (पित्तरों) का पवित्र भोग अर्पणों से मैं नित सेवा करता हूँ। पवित्र शरीर से पवित्र वातावरण में तेरा ध्यान करता हूँ। और अन्तःकरण के मंत्रोचारणों से, तेरा ध्यान मैं, अपनी ओर आकर्षित करता हूँ।

तेरी ही कृपा से अब मुझे यह मालूम हो गया, कि तेरी यह अविरल लीला, समय (काल) के कारण ही गतिशील है। समय ही तेरी लीला का वाहन (carrier) है।

....

किन्तु हे, महाशक्तिमान !

तेरी लीला के कारण, यह समय है ? या समय के कारण ही यह तेरी लीला है ?

यह मुझे समझ में नहीं आ सका है। इसके लिए एकान्त, शान्त वातावरण में मैं तेरा साधना (exert) करता हूँ।

तेरी ही कृपा से अब मुझे समझ में आ गया है कि तेरी अविरल लीला का नियंत्रक (controller) समय ही है। तेरी अनगिनत लीलाओं के आरंभ और अंत का नियंत्रक समय ही है।

ऐसे में, हे, महाशक्तिमान !

तू ही परम स्थिति में परम समय (महाकाल) है। तू ही सृजन एवं पुनः सृजन की स्थिति में सूक्ष्म समय (सूक्ष्म काल) है। और तू ही स्थूल रूप (शरीर) की स्थिति में चरम सूक्ष्म (आत्मा) चरम समय (अंशकाल) है।

तू ही अंशकाल (चित—रूह—Spirit) होकर नारी के कोख में, जुगल बिन्दुओं (नर के श्वेत एवं नारी के रक्त) में, प्रवेश से मिश्रित बिन्दु होकर,

शरीर की रचना में, तरल से स्थूल और छोटा (बच्चा) से बड़ा (बूढ़ा) शरीर में विकास करता है। और इस क्रम में छोटा से बड़ा (मजबूत) शरीर को समय के प्रभाव से झुलसाकर, कमजोर ही कमजोर बनाते हुए नष्ट भी करता है।

अहा ! तू, तो, इस कारण, एक महा मूर्तिकार (Idol Maker) है।

अतः इस आने जाने, बनाने, बिगाड़ने की इस अथाह लीला में, हे, महाकाल !

तू ही शरीर रूप में, अवतरित होकर, प्रगट होते हैं। प्रगट रूप में अपने को दिखाते हैं। अपने को जनाते हैं। पर कितने ही लोग तुझे समझ पाते हैं। स्थूल प्रगट रूप, में तेरा ही मन है। तेरा ही बुद्धि है। अप्रगट सूक्ष्म रूप में तेरा ही ज्ञान मन है। तेरा ही ज्ञान बुद्धि है।

जिसे साधना के जरिए तेरी ही कृपा से, तुम्ही को जानने के लिए ही जागृत किया जाता है। कुलाचारी जिंदगी में लाखों-करोड़ों मंत्र जाप के तपस्या के द्वारा अतिशीघ्र जागृत किया जा सकता है। और इस प्रकार जागृत शारीरिक बुद्धि एवं जागृत आत्मिक बुद्धि को ही योगियों के द्वारा चैतन्य (concious) कहा जाता है।

ऐसा ही चैतन्य बुद्धि से मुझे यह आभास मिलने लगा है, कि हे महाकाल ! हे, महा यादुगर, हे महा मूर्तिकार।

तेरी रूपों का क्रम अनगिनत है। और उन रूपों के नामों का क्रम भी अनगिनत है। तेरे संबंध का ऐसा अनुभव का ज्ञान को ही विवेक ज्ञान कहा जाता है।

तू ने ही, अपने लीला के द्वारा सभी रूपों में उत्तम, एक मूर्ति (आदमी शरीर) रूप में ही पूरे वृहद् ब्रह्माण्ड को, समा दिया है। इस बौना मूर्ति (क्षूद्र ब्रह्माण्ड) आदमी शरीर रूप में, मानों तू ने एक नगर ही बसा दिया है। इस कारण ही पंच तत्वों के इस शरीर (सड़ने वाला) को हे महाशक्तिमान ! पुर (नगर) भी कहा जाता है। पुरुष (तेरा पुर—नगर) कहा जाता है।

ऐसे में, ऐ महाशक्तिमाम ! हे पुरुषों का पुरुष !

अभी एक अवतारी के, एक पैगम्बर के, एवं एक ईश्वर-पुत्र के, एक

गुरु के, एक तपस्वी के, नाम को ही संसार में लोगों ने अपना लिया है। और उस एक नाम का धर्म को ही लोगों ने अपना लिया है।

और उस अवतारी, पैगगम्र, इकलौता पुत्र, शरीर रूप एवं उस शरीर रूप के नाम के, अलग-अलग संत बन गए हैं। उन संतों ने चेलों और भक्तों का अलग-अलग गिरोह बना लिया है। और भजन कीर्तन, पठन-पाठन एवं गुण गानो में वे केवल एक का नाम रट रटकर ही जिंदगी अन्त करते हैं। उनमें दैविक फल प्राप्ति के कुछ भी संकेत नहीं देखे जाते हैं। वे साधारण ही साधारण रह जाते हैं। इस प्रकार वे चेतन्य लाभ के बिना ही जिंदगी को अन्त करते हैं।

जिंदगी अन्त होने के बाद वे कहाँ चले जाते हैं, किसी को भी पता नहीं रहता है। उनके पुत्र, उनके साथी चेले तो क्या—उनके संत तक को भी यह पता नहीं चल पाता है, कि आखिर वे शरीर रूप से अंत होकर (मरकर) सूक्ष्म रूप (जीव रूप) में कहाँ चले गए ? किसी को पता नहीं है। वे ऐसा खो जाते हैं, कहाँ खो जाते हैं, कि किसी को कुछ भी पता नहीं ?

ऐसा इसीलिए होता है, कि वे कुल विहीन हैं। फिर भी लोग, बहुत से लोग, केवल एक नाम के ही भिन्न धर्मों में शामिल हो जाते हैं। आज उनकी बड़ी खासी संख्या है। आज उनकी बड़ी खासी धन है। क्योंकि यहाँ सरल जिंदगी है ! केवल अपने कमाने खाने की जिंदगी है। अपने आत्मा (जीव) के एवं अपने पिता-माता, दादा-दादी के बाद के जीवन (Life after life) की किनको क्या परवाह !

तेरे इतने विशाल ब्रह्माण्ड के इतने विशाल दैविक कुल तो क्या—खुद अपने जन्म के कुल को वे समझ नहीं पाते हैं। क्योंकि शायद इस दिशा में उनकी मानसिक कमजोरी है। वे, अपने विवेक ज्ञान को जागृत नहीं कर पाते हैं। और इस कारण वे अपने को ही समझकर अपने कुल को समझ नहीं पाते हैं और कुल को कायम नहीं कर पाते हैं।

इससे पता चलता है, कि उन एक नाम के धर्म वालों को, अपने पर विश्वास नहीं है। अपने घर पर विश्वास नहीं है। क्योंकि जो कुछ भी वे दैविक कर्म करते हैं, वे दूसरे के भरोसे करते हैं। दूसरे के घर के भरोसे करते हैं। जिस भरोसे के पवित्रता का कोई निश्चय (guarantee) नहीं है।

अतः यह कहा जा सकता है, कि उनका विश्वास अपने शरीर से बाहर है। अपने घर से बाहर है। अपने में नहीं है। अपने घर में नहीं है।

इसके विपरीत कोलों के विश्वास तो अपने ही शरीर पर है। अपने ही घर पर है। तेरे ही पुर (City) रूप शरीर पर है। और उस पुरुष के निवास के घर पर ही है।

मिलान कर मैंने देखा तो पाया कि कोलों का कितना उपयुक्त, कितना तर्क संगत, विश्वास है? कहा नहीं जा सकता है। आखिर वे तो कुलीन (noble) है न। ठीक वैसा ही कुलीन है, जैसा तू कुलीन है।

....

वे (गैर कोल) लोग एक रूप के भ्रम में है। वे वैसे एक रूप के एक नाम के भ्रम में हैं। नहीं तो वैसे एक रूप में, वैसे एक रूप के नाम के. तेरी कितनी ही चिनगारियाँ (अंश शक्तियाँ) इस संसार में छिटकती आयी है? और शरीर रूपों में कुछ समय तक धरती पर ठहर कर, कितनी ही बार तुझमें विलीन हो गई हैं? किन्हीं को हिसाब नहीं है। किन्हीं को पता नहीं है।

लोगों को, उन चिनगारियों (चित्तों) का पता नहीं है। उन चिनगारियों के शरीर रूपों का, उन शरीर रूपों के सूक्ष्म रूपों (आत्माओं) का पता नहीं है। अपने हीं घर में अपने पिता-माता के शरीर रूप में आकर गायब हुए चिनगारियों (चित्तों, रूहों, spirits) का पता नहीं है।

केवल एक ही चिनगारी रूप (अवतारी, पैगम्बर, ईश्वर पुत्र इत्यादि रूप) के नाम का ही पता है। और मात्र इतनी सी बात पर लोग अपने को भूले हुए हैं। और यहाँ तक कि अपने निवास के घर तक को दैविक सूकर्मों के हैसियत से भूले हुए हैं।

लोग उसी एक नाम के भिन्न धर्म के, अलग अलग गिरोहों में, अपने को बाँटे हुए हैं। और बंटकर मात्र एक रूप के एक नाम पर इतराने लगे हैं। झगड़ा करने लगे हैं। अपने अपने मत्तों का, अपने अपने तरीकों का झगड़ा करने लगे हैं।

हे, परमेश्वर! हे, कुलेश्वर।

वैसे गलत फहमियों में, मुझको भुलाना नहीं है। और इस तरह अपने को अपने सुपुत्रों से, सुपुत्रियों से भुलाना नही है।

वरन तुझको ही मुझे स्मरण करना है। तेरे संपूर्ण कुल को ही मुझे स्मरण करना है। तेरे ही कुल में मेरे अपने कुल को शामिल (unite) करना है। तेरे ही कुल के साथ अपने कुल को या अपने ही कुल के साथ तेरे कुल को पूजना है। पवित्र भोग अर्पण करना है।

और इस तरह निःस्वार्थ कुल सेवा के रास्ते, समय आने पर, पूर्वजों के कतार में ही शामिल होकर, तुझमें ही विलीन हो जाना है। विलीन होकर परिशुद्ध हो जाना है। और तेरे स्थान से फिर अपने ही कुल उत्तराधिकारी परिवारों में नवीन पुत्र के रूप में लौट आना है।

ऐसी, इसी तरह की दैविक तीर्थ यात्रा ही मुझको पसंद है।

मेरा धाम (शरीर एवं घर) से तेरा धाम
तेरा धाम (रूप रहित) से मेरा धाम

हरि ओम तत् सत्

—:—

भूत

हे, महाशक्तिमान! हे, भूतों के भूत, महाभूत!
हे, देवों के देव महादेव, हे जीवों के जीव, परमजीव!

कुलाचारियों को छोड़कर अन्य आचारियों के लोग, खासकर एकाचारी लोग, तेरे अविरल परिवर्त्तनों (never ending evolutions) का ज्ञान बिना, अक्सर भूत प्रेतों का मजाक उड़ाते हैं। अक्सर इनके पूजा करने वालों का मजाक उड़ाते रहते हैं। कहते हैं, कि अरे! ये तो भूत प्रेत की पूजा करते हैं।

भूत और प्रेत इत्यादि तो तेरे अंश के परिवर्त्तनों के स्तरों (stages) के ही अलग अलग नाम है। इस कारण, इन अंशों के स्तरों का मजाक उड़ाना तो तेरा ही मजाक उड़ाने के बराबर है।

आखिर वे, बहुत अच्छी तरह बिचार कर देखें, आखिर मजाक उड़ाने वाले

भी, तेरा अंश ही तो है। अवतारी पैगम्बर ईश्वर के इकलौता पुत्र इत्यादि तेरी शुद्ध अंश ही तो हैं।

तो, अपने एक अंश होकर, दूसरे अंश का मजाक उड़ाना क्या-जाने कैसा तो लगता है। तेरा ही अंश हो कर तेरे अंशों का मजाक उड़ाना क्या जाने कैसा तो लगता है! महा मूर्खता के सिवाय और क्या हो सकता है।

इसी संबंध का सवाल जो मुझसे पूछा गया था, और उसके जवाब में जैसा मैंने चर्चा किया था, पूर्ण वर्णन सभी के कल्याणार्थ अज्ञान को मिटाने के लिए मैं प्रस्तुत करता हूँ।

भूत (जीव)

दिनांक १९-४-१९८० को करीब ६ बजे संध्या के समय वन-विश्रामागार बरवाडीह, जिला पलामू, के वाराण्डा में बैठे हुए श्री एल० एस० डेमटा ने मुझसे यह कहा—कि इस दिशा में आप तो बहुत दिल चस्पी लेते हैं; इसलिए पूछते हैं।

लोग भूत के बारे में कहते रहते हैं। क्या-आपने कभी भूत को देखा है? क्या—आप भूत दिखा सकते है?

मैंने तत्काल जवाब दिया,—जी हाँ। भूत तो आपके शरीर में भी है। मेरे शरीर में भी है। अगर आपके शरीर से भूत निकल जाए और मेरे शरीर से भूत निकल जाए, तब हम सब का तो उसी क्षण सटक सीता राम हो जाए, राम नाम सत्य हो जाए याने हम तुरंत मर जाएँ।

तब श्री डेमटा ने कहा कि नहीं, लोग भूत बताते हैं। और दिखाते भी हैं। उनके इस बात पर बल देते हुए श्री दिनेश पाठक, सहायक बन्दोबस्त पदाधिकारी, डालटेनगंज, ने भी कहा कि उसने भी एक स्थान पर भूत के होने का अनुभव किया है। और लोगों ने उसे घूमते हुए देखा भी है।

उनके ही बात पर बात मिलाते हुए, तब मैंने भी कहा कि भूत देखे जा सकते हैं। उनके निकट आने का आभास को भी अनुभव किए जा सकते हैं।

शरीर के बाहर के शरीर रहित भूत को तो क्या-अपने ही शरीर के भूत (आत्मा) को भी देखा जा सकता है। अनुभव किया जा सकता है।

मेरे या दूसरे के दिखाने की क्या जरूरत है? खुद अपने अपने साधना के बल से खुद अपने शरीर के भूत को देख सकते हैं। उन्हे शरीर के बाहर के शरीर रहित भूतों के साथ भी संपर्क करा सकते हैं।

लेकिन अपनी भूत और बाहर के भूतों को देख सकने की क्षमता का विकास, दैविक अनुशासन पर आधारित संयम नियम के रहन सहन के द्वारा ही संभव हो सकता है। अन्य प्रकार से संभव नही है।

तब सवाल यह होता है, कि भूत आखिर है क्या? जो सबके लिए एक विस्मय का विषय बना हुआ है।

भूत=परमजीव के अंश जीव, के मात्र एक लक्षण का नाम है। स्वभाविक लक्षण के मुताबिक, जीव के स्वतः परिवर्त्तन शील, कई स्थितियों में से, केवल एक स्थिति का नाम भूत है।

हमने महाशक्तिमान के परिवर्त्तन के परम स्थिति एवं चरम स्थिति के संबंध में जाना है। परम स्थिति का ही नाम-परमात्मा, परमेश्वर एवं परमजीव भी है। परम भूत भी है।

उन्हीं के अंश के चरम स्थिति का नाम आत्मा है। इसे हम चरमात्मा, चरमेश्वर एवं चरमजीव भी कह सकते हैं। इसे भी हमने जाना है।

एक मात्र इसी चरम जीव के संबंध में ज्ञान पाने के लिए ऋषियों ने मुनियों ने पौराणिक युगों मे कठिन से भी कठिन तपस्या किया था। और परम जीव का ज्ञान पाने के लिए तो समाधि भी किया था।

तपस्या के दौरान उसी एक मात्र जीव के, अंशों के विभिन्न स्थितियों के बारे में जो उन्हें ज्ञान मिला, उन्हीं स्थितियों का उन्होंने अलग अलग नामकरण किया था।

ऐसा होना भी चाहिए। क्योंकि—इससे जीव के विकास (evolution) के विभिन्न चरणों की जानकारी अधिक से अधिक स्पष्ट हो जाती है।

अतः अब हम अंश जीव को उनके आरंभ की स्थिति से समझने का कोशिश करें।

सबसे प्रथम में—जीव अदृश्य है, अनाम है, अनजान है केवल योगियों के द्वारा ही दृश्य है। पर दम्पति के संयुक्त इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया से प्रभावित

मिलन के फलस्वरूप उत्पन्न जुगल विन्दु में जब वह अदृष्य अंश जीव प्रवेश करता है, तो उस अंश जीव के प्रवेश मात्र से, वह जुगल विन्दु, मिश्रित विन्दु में परिणत होकर सजीव हो जाता है। अन्यथा जुगल विन्दु सजीव नहीं हो सकता है।

चित्त—विन्दुओं का मिश्रण हो जाने मात्र से ही चित्त का निर्माण पूरा हो जाता है। तो सूक्ष्म रूप जीव के इस मिश्रण की स्थिति का नाम ही चित्त है। इस चित्त का अंग्रेजी नाम नही है।

तब श्री डेमटा ने बात काटते हुए फिर यह सवाल किया—कि, नही हमने जीव को अणु वीक्षण यन्त्र (microscope) से देखा है। वह एक शुक्राणू (sperm) होता है। इसलिए इस बात को तो हम नही मान सकते हैं। क्योंकि शुक्राणू को कुछ समय तक के लिए सूरक्षित भी रखा जा सकता है।

तब मैंने फिर जवाब दिया कि, ठीक है। निश्चय ही वे विन्दु स्वरूप शुक्राणू है। विन्दु में शुक्राणू अवश्य है। आपका ज्ञान बिलकुल सही है।

लेकिन इसके आगे अब आप यह बात बताईये कि नर शुक्राणू (नर के श्वेत विन्दु) और नारी शुक्राणू (नारी के रक्त विन्दु) दोनों विन्दुओं का नारी के कोख, अत्यंत परोक्ष (most secret) में आखिर मिलाता कौन है?

क्योंकि उन दो विन्दुओं के मिलन (union) में एक जीव के मिश्रण (compound) के विना तो शुक्राणूओं का एक बच्चा के रूप में जन्मना संभव नहीं है। संभव नहीं हो सकता है।

तब श्री डेमटा चुप हो गए।

मैंने आगे फिर उनको कहा कि वही महाशक्ति (Supreme Divine power) का अंश शक्ति (अंश प्रकाश Divine Light)—जिसके द्वारा नर एवं नारी के दो अलग अलग शुक्राणूओं मिश्रण होकर सजीवकरण होता है, का ही नाम उस मिश्रण की स्थिति में चित्त है। यह चित्त संस्कृत क शास्त्रीय नाम है। अन्य भाषाओं के चित्त का नाम नही है।

आत्मा—वह चित्त, अपनी शक्ति (power) से मिश्रित विन्दु के आकार का विकास करती है। मिश्रित विन्दु के फैलाव से फूटने के साथ, झट से प्राकृतिक तत्वों का, चित्त पर घनीभूतिकरण (Condensation) होता है। चित्त पंच तत्वों के ढक्कन में छिप जाता है। यही पंच तत्व, चित्त का शरीर हो जाता है।

इस नैसर्गिक (earthly) शरीर का, चित्त अपने ही शक्ति से विकास करता है। और विकास करते हुए जब जन्म लेता है, तो जीवित बच्चा या बच्ची रूप शरीर में जन्म लेता है। और यह सब तरह से पूर्ण बच्चा रूप है। आखिर यह वृहत ब्रहमाण्ड का बौना क्षूद्र ब्रहमाण्ड (बच्चा) रूप ही तो है। जिसमे वृहत् ब्रहमाण्ड के सभी कुछ हैं।

चित्त अपनी शक्ति से फिर शरीर का विकास करते ही जाता है। और बच्चा से जवान बनाते हुए बुढ़ा बना देता है।

इस प्रकार विन्दु रूप से घनीभूत रूप में बचपन से बुढ़ापा तक शरीर चित्त का धारण करता है। आरंभ का वही चित्त शरीर में ही रहकर, शरीर को जीवित बनाकर, जब तक शरीर को चलायमान रखता है, तब तक वह शरीर का आत्मा कहलाता है। पर असली मे आत्मा रूह spirit वही आरंभ का सूक्ष्म चित्त है। अंश प्रकाश है।

जीव—समय पर या समय के पहले शरीर का जब मृत्यु हो जाता है, तो यह मृत्यु शरीर से आत्मा के सदा के लिए निकल जाने पर ही होता है। या ऐसा कहा जा सकता है कि आत्मा शरीर को छोड़कर शरीर को मारता है। और सिद्ध योगी के मामले में आत्मा शरीर में ही रहकर शरीर को अमर कर देता है।

आत्मा के शरीर से निकल जाने पर, आत्मा शरीर रहित हो जाता है। तब दाह संस्कार (death ceremony) के बाद, गैर-कुलाचारी (कुल विहीन) समाज में वह आत्मा शरीर के दफनाने के स्थान, कब्रिस्तान या श्मशान घाट में ही पड़ा रह जाता है। और पहले से ही पड़े हुए शरीर रहित आत्माओं के साथ, शामिल होकर दिशाहीन, शरण विहीन, भूखे-प्यासे भटकते रहता है। विचरण करते रहता है। लेकिन फिर भी इस त्यक्त (abandoned) आत्मा की यह प्रवृति गजब है कि वह अपने शरीर के कब्र के पास हमेशा रहता है।

सूर्यास्त के गोधूली के वेला मे, अधिक अन्धकार होने के पहले, दूर से या देर रात के सुनसान वेला मे, नजदीक मे, ऐसी आत्माएँ रोशनी के रुप में दिखाई देती है। कभी तो आदमी को आदमी रुप में जाते हुए रास्ते में ही भेंट हो जाती है तो कहते हैं कि भूत मिला था।

यह घूमता फिरता शरीर मुक्त (bodyless) आत्मा आरम्भ का वही चित्त है, जिसे भेंट होने पर, दिखाई देने पर, लोगों के द्वारा भूत-भूतात्मा, (spirit ghost) कहलाने लगता है। पर वास्तव में वह मिश्रित विन्दु का चित्त है (शक्ति) है।

भूत संस्कृत का शास्त्रीय शब्द है। भू का अर्थ, होना (to be) है। अतः भूत का माने, होने वाला या होते रहने वाला, होता है।

पूर्व जन्म में जीवित शरीर अवस्था के कर्म के मुताबिक या इस जन्म के जीवित अवस्था के कर्म के मुताबिक आत्मा का परिवर्तन (evolution) होता है। बुरे कर्मों के गन्दे छापों से परिशुद्ध होने के लिए, निम्न स्तर शरीरों के योनियों से होकर आत्मा को होते (जन्मते) रहना पड़ता है। होते रहने के प्रतीक्षा में कब्रिस्तान या श्मशान घाटों में पड़े रहने वाले (मृतक) आत्मा को ही दिखाई देने पर भूत कहते हैं।

इसी तरह के भूत (होते रहने वाले) होने के कारण ही वह पुनः सूक्ष्म चित्त रूप में परिणत होकर, निम्न स्तर के शरीरों में जन्मते रहता है। परिशुद्ध होने तक जन्मते रहता है। पर वह वास्तव में आरम्भ का वही चित्त (शक्ति) है।

प्रेत—वही चित्त, जीवित शरीर के अवस्था में, याने शरीर के आत्मा की स्थिति में, शरीर के इन्द्रियों के अच्छे कर्मों के मुताबिक जब स्वच्छ ही रह जाता है, तो समय पर या असमय पर के शारीरिक मृत्यु के बाद, शरीर रहित होने पर पुनर्जन्म के चक्र से छूटकारा पा जाता है। याने वह चित्त (आत्मा) हमेशा के लिए जन शरीर मुक्त अवस्था (bodyless stage) को प्राप्त हो जाता है। तब प्रेत हो जाता है।

फिर इसी स्थिति के लिए ही लोगों के द्वारा यह भी कहा जाता है कि उसको (याने उस नाम के दिवंगत आत्मा को) मुक्ति (salvation) मिल गई।

इसी प्रकार जन्म मरण के बन्धन से छूटकारा पाया हुआ आत्मा (चित्त) को ही प्रेत कहा जाता है। प्रेतात्मा कहा जाता है।

संस्कृत के शास्त्रीय शब्द प्रेत—दो शब्दों (परः+इतः) के संधि से बना है। बार बार इतः ने (जन्मने-मरने) से जो परे हैं, याने जिस आत्मा ने भव सागर को पार किया है, उसी को ही प्रेत कहते हैं।

यक्ष—प्रेत अक्सर अकेले किसी विरान स्थान के गाछ में रहते हैं। क्योंकि विरान स्थान में होने के कारण गाछ पवित्र रहता है। प्रेत अक्सर विरान स्थान के पोखर में रहते हैं और यक्ष भी कहलाते हैं। वनवास के दौरान पांचो पाण्डवों को ऐसा ही यक्ष का दर्शन पोखर मे हुआ था।

राक्षस—वे हानिकारक नहीं होते हैं। उनके रहने के स्थान के निकट पहुंचने पर वे डराते हैं। और उनके रहने के स्थान को गन्दा करने पर ही वे क्रोधित हो राक्षस के आवेश में आकर हानिकारक हो जाते हैं। रात में उनके रहने के स्थान के बगल से होकर जाने पर सफेद हाथी का रूप धारण कर रास्ता छेंकते हैं। यह केवल डराने के लिए होता है। आदर पूर्वक उनसे निवेदन करने पर वे मान जाते हैं और वे हट भी जाते हैं।

देव—इसके अगले चरण के उत्तरोत्तर परिवर्तन में समय आने पर वे देवत्व (god) को भी प्राप्त होते हैं। देवत्व को प्राप्त होने पर वे आदमी शरीर रूप में ही सुनहला रंग में परिवर्तित हो जाते हैं। ऐसा सुनहला रूप उपनिषद के ऋषियों के द्वारा देखा गया है। इशावास्य उपनिषद के ऋषि ने इस सुनहला रंग के आवरण का वर्णन किया है।

देवत्व को प्राप्त होने पर वे सुन्दर से सुन्दर विशाल बंगलों में, योग निद्रा में देखे जाते हैं। एक-एक बंगले में वे बहुत कम संख्या में रहते हैं। इससे पता चलता है कि देवत्व को प्राप्त होने वालों को संख्या कम है।

ईश्वर—इससे आगे के उत्तरोत्तर परिवर्तन में, वे शायद ईश्वरत्व को प्राप्त होते हैं। क्योंकि उनके तरल स्वच्छ ताप रहित प्रकाश रूप में आने पर ही उनका विशाल दैविक प्रकाश (Divine Light) में विलीन होना संभव है। वे प्रकाश रूप ईश्वर तत्व को प्राप्त होकर अंत में परम पवित्र स्थिति के ताप रहित दैविक प्रकाश में विलीन हो जाते हैं। और इस विलय के साथ ही उस आरम्भ के चित्त (आत्मा) का अन्त (मृत्यु) हो जाता है। और आरम्भ के मिश्रित विन्दु के चित्तका अलग अस्तित्व यहीं समाप्त हो जाता है। यही चित्त, आत्मा या जीव की मृत्यु है।

यही चित्त के परिवर्त्तन (evolution) का दैविक चक्र (Divine Cycle) है। यह चक्र कुल मिलाकर ऋषियों एवं मुनियों के मुताबिक करीब ४,३७,००००० वर्षों का है।

सही में कहा जाय तो प्रत्येक शरीर का आत्मा एक अंश जीव है। अंश प्रकाश रूप एक अंश जीव है। यही प्रकाश रूप अदृश्य, सूक्ष्म जीव, परम जीव (परम प्रकाश) के अंश रूप में, कभी विभिन्न शरीरों में प्रवेश पाकर शारीरिक जिंदगी, प्राकृतिक जिंदगी बिताते हैं। और कभी शरीरों से परे होकर शरीर मुक्त जीव का जीवन बिताते हैं। क्योंकि शरीर की जिन्दगी होती है और जीव का जीवन होता है।

उनके ऐसी स्वभाविक चक्र परिवर्त्तनों के विभिन्न स्थितियों का ही नाम ऋषियों एवं मुनियों के द्वारा चित्त, आत्मा, भूत, प्रेत, जीव, यक्ष, देव, ईश्वर इत्यादि नाम कहा गया है। अन्यथा सही में कहा जाए तो वह प्रकाश रूप एक जीव है।

हमारे ही शरीर के चित्त (आत्मा) मृत्यु के बाद, शरीर मुक्त होने पर वृहत् ब्रह्माण्ड में भूत या प्रेत या देव के रूपों में विचरण करते रहते हैं। ये कहीं न कहीं सेवा पाने के लिए आतुर रहते हैं।

कुलाचार विहीन समाज के लोगों के चित्त (आत्मा) शारीरिक मृत्यु के पश्चात शरीर रहित होने पर भूत, प्रेत या देव के रूप में सेवा पूजा के पवित्र भोजन पानी के अर्पण के अभाव में भूखे-प्यासे भटकते रहते हैं। सेवा बिना असंतुष्ट रहने के कारण ये, किसी न किसी पवित्र विचारों वाले जीवित व्यक्ति पर हावी हो जाते हैं। और उनको सपने में दर्शन देकर, या साक्षात दर्शन देकर, उनसे सेवा पाना चाहते हैं। और उनके घर का, परिवार का ईष्ट देव बनकर रहना चाहते हैं। और इस सेवा के बदले में ये सेवक के घर को धन धान्य से भर दिया करते हैं। और सेवा करने के लिए तैयार नही होने पर तरह तरह से तंग करते हैं। कभी गंदगी गिराते हैं। कभी हड्डी गिराते हैं, तो लोग कहने लगते है, कि उस घर में जीन लग गया है।

पर कुलाचारी समाज में, अपने घर के संबंधियों का वही चित्त शारीरिक मृत्यु के बाद, उत्तराधिकारी पुत्रों, के द्वारा पिता महान पित्तरों के रूप में, प्रतिदिन,

प्रतिवेला पवित्र रसोई (आदिग) के पवित्र भोजन पानी का सेवा पूजा का भोग अर्पण पाते रहने के कारण हमेशा संतुष्ट रहते हैं। परिवर्त्तन क्रम में भूत, प्रेत देव इत्यादि होकर भी असंतुष्ट रहकर उनके भटकने का सवाल नहीं है। वरन प्रति दिन अपने जन्म के घर में अपने जन्म के पुत्र द्वारा भोग पाते रहने के कारण वे तो कुलाचारी उत्तराधिकारी परिवार का ईष्ट देव ही बने होते हैं। इस कारण घर में जीन जा नही सकते हैं। और इस प्रकार उत्तराधिकारी पुत्र के धन एवं जन का दैविक संरक्षण भी प्रदान करते रहते हैं। अगर घर में पत्नि के द्वारा, कुलाचार का सही पालन किया जाता रहे, तो उनका विमार पति परदेश में कभी नही मर सकते हैं। जबभी मर सकते हैं तो वे घर पहुंचकर ही मर सकते हैं।

समयान्तर में, कुलाचारी परिवार के चित्त का जब पूनर्जन्म भी होता है, तो अपने उत्तरीधिकारी कुलाचारी पुत्र के घर में ही पुत्र—दर—पुत्र के रूप में होता है। होता रहता है। इस प्रकार परिवर्त्तन के क्रम के आरंभ का वह चित्त, कुलाचारी परिवार में भी खोता नहीं है। कभी रोता नही है।

इतनी संक्षिप्त व्याख्या के बाद, फिर मैंने जब पूछा कि अब भूत की बात समझ में आ गई ?

तो श्री डेमटा, ने मुस्कुरा कर कह दिया—जी, हाँ।

—:—

गुलाम

कोई तो राज के गुलाम थे कोई धर्म के गुलाम थे। कोई अभी राज के गुलाम नहीं हैं, पर धर्म के गुलाम अवश्य हैं।

कुलाचार ग्रन्थ (चारो भागों) के अध्ययन के बाद यह बात आपको अवश्य स्पष्ट होगी कि कुलाचारी लोग कभी भी न तो राज्य के गुलाम थे और नहीं दूसरे के धर्म के गुलाम थे। इन्ही दो गुलामियों से बचने के ख्याल से ही पूर्वज कोलों ने वीहड़ जंगलों का सहारा लिया था। और जंगलों में छिपकर सीधे कुलेश्वरी एवं कुलेश्वर के संरक्षण में कुलाचार का निर्वाध पालन किया था। और घोर हिंसक जन्तुओं के बीच, विषैले कीड़े मकोड़े सांप बिच्छुओं के बीच सबसे सुरक्षित एवं सब से आनन्दायक जिंदगी बिताया था।

अब बदलते परिस्थितियों में शायद राज्य के गुलाम तो होंगे ही, क्योंकि उनके गावों का मुंडा मानकी शासन पद्धति अब सामान्य प्रशासन पद्धति के दवाव में है। किंतु इतनी उत्तम कुलाचार संस्कृति को लोप होने, नष्ट होने से बचाने के लिए सामान्य प्रशासन के, कोलों के संस्कृति एवं रीति रिवाजों (customs) के पौराणिक संस्थाओं को नष्ट करना उचित नही है। उन्हे प्रश्रय देकर कुलाचार के हित में पनपने देना ही उचित है।

पर कुलाचार ग्रन्थ के प्रकाशन के बाद, मेरा पूर्ण एवं दृढ़ विश्वास है है कि वे पर धर्म के गुलाम कभी नहीं होंगे। उनका कुलाचार कायम रहेगा। और कायम रहकर विश्व के आदिवासियों को एवं गैर आदिवासियों को प्रज्वलित करता हुआ धार्मिक मार्ग दर्शन करता रहेगा। और पूर्ण विश्वास है कि सामान्य प्रशासन भी कुलाचार की आवश्यकता को महसूस (realise) करेगी।

कुलाचार की इतनी बातें, कुलेश्वरी एवं कुलेश्वर की कृपा से ही मैंने निर्भीक प्रगट किया है।

हे, उत्तराधिकारी कोलों ! आशा है, कुलेश्वरी एवं कुलेश्वर की कृपा से ही आप भी कुलाचार का निर्भीक पालन करते रहेंगें।

उस समय में, महाभारत के लड़ाई के समय में, श्री अर्जुन को कुल के नाश की चिंता हो गई थी। (देखें भागवत गीता, प्रथम अध्याय के स्लोक ३८ से ४२ तक)

अगर श्री अर्जुन को कुल के नाश की चिंता नहीं होती, तो महाभारत की लड़ाई सीधे आरंभ होती।

लेकिन अर्जुन को कुल के नाश के साथ ही शाश्वत (eternal) कुल धर्म के नाश की चिन्ता हो गई थी। और कुलस्त्रियों के दुषित होने से पवित्र भोजन पानी के अर्पण के अभाव में पितरों के भूखे प्यासे भटकने की चिंता हो गई थी और इसी चिंता में उन्होंने अपने ही लोगों को लड़ाई में मारकर कुल को नाश करने से, भगवान श्री कृष्ण को इन्कार कर दिया था।

अर्जुन के इन्कार के कारण ही खूद भगवान श्री कृष्ण को, ज्ञान के गीत

सुनाकर अर्जुन को समझाने पड़े थे। उनके भ्रम को दूर करने पड़े थे। जिसे व्यास मुनि ने बड़े यत्न से संकलन किया था।

परिणाम, भगवान श्री कृष्ण के मुहँ से कुलेश्वरी के ही ज्ञान के गीत "भागवत गीता" में सामने आये हैं।

इससे प्रमाणित होता है, कि अर्जुन कोल थे। वरन कौरव-पाण्डव ही कोल थे। और महाभारत की लड़ाई कोल राज्य परिवार की ही लड़ाई थी।

इसी भागवत गीता के कुल शब्द का, और इसी शब्द से संबंधित हमे नीचा दिखाने के ख्याल से इस्तेमाल किए जाने वाले कोल शब्द के व्याख्या की, इस समय मुझे चिंता हो गई। और अपने सरल लेख के द्वारा आपको समझाने की चिंता हो गई।

परिणाम, कुलेश्वरी की ही कृपा से कुल एवं कोल शब्दों का समन्वित ज्ञान कुलाचार नामक ग्रन्थ में सामने आये हैं।

कोल शब्द का अर्थ सूअर बताने वाले सचमूच में ही सूअर हैं। वे अभी आदमी रूप मे तो हैं। पर उनके शरीर में पूर्व जन्म के सूअर शरीर का ही आत्मा है। अन्यथा वृहत् वृहमाण्ड में पवित्रत्तम शब्द कोल का वे वैसा गलत अर्थ नहीं लगाते। वे निश्चय ही कुलेश्वरी के दण्ड के भागी होंगे।

जिसने कोल शब्द का अर्थ सूअर कहा था, या अभी जो कोल शब्द का अर्थ सूअर बताते हैं वे निश्चय ही भिन्न धर्म के गुलाम हैं। अन्यथा अगर वे धार्मिक ज्ञान के आध्यात्मिक ज्ञान के एवं तत्व ज्ञान के स्वतन्त्र ज्ञाता हो जाएं तो दूसरों को तो क्या—खूद अपने को ही वे कोल कहने लग जाएं।

जो कुलाचार में बाधक बनेगा
जो कुलाचार को नष्ट करेगा।
जो कुल धर्म को नष्ट करेगा
वह खूद ही नष्ट हो जायगा
संसार का कोई ताकत उसको बचा नहीं सकेगा।

—:—

परीक्षणीय

तो पवित्र क्या क्या चीज है ?

जिसके द्वारा शरीर पवित्र हो सकता है।

प्रकृति में पानी एक ऐसा तत्व है, जिसके द्वारा शरीर पवित्र हो सकता है। शरीर ही नहीं वरन शरीर को जीवित रखने के लिए उपयोगी खाद्य पदार्थ भी पवित्र हो सकता है। कौन पानी किस प्रकार पवित्र है ?

सोता (fountain) का पानी पवित्र है। क्योंकि यह धरती के गर्भ से निकलता है। अछूता है। इसी कारण ही पौराणिक ऋषियों एवं मुनियों का कुटिया, सोता के निकट ही हुआ करता था।

नदी के बालू के अन्दर का कुआं का पानी पवित्र है। क्योंकि यह उपर से अछूता है।

इसी कारण ही पौराणीक आदिवासीयों का गांव, पहाड़ी नदी के किनारे बसा करता था।

कुआं का पानी पवित्र है। क्योंकि यह भूमि के सतह के बहुत नीचे है। इसी कारण ही सभी के द्वारा पीने एवं पकाने के उपयोग में लाया जाता हैं।

ये पानी अर्घ अर्पण के योग्य हैं। ये पानी भोग अर्पण के सामग्रियाँ बनाने के योग्य है।

अन्य पानी पोखर आदि के पानी साधारण पानी है। नहाने, कपड़ा साफ करने, बासन वर्त्तन के धोने के उपयोगी पानी है।

पर उपरोक्त सभी तरह के पानी को लोटा में रखकर उसमें पिसा हुआ थोड़ा हल्दी और सिंदुर डालकर पवित्र किया जाता है। और वैसा पवित्र कृत पानी को, तुलसी के टहनी के द्वारा अपने शरीर पर छिड़क कर, शरीर को पवित्र करते हैं। घर में छिड़क कर घर को पवित्र करते हैं। आँगन में छिड़क कर आँगन को पवित्र करते हैं। और तब शुभ कर्म आरम्भ करते हैं।

इसका क्या भरोसा है, कि जिस पानी का हम उपयोग कर रहे हैं, वह पवित्र है ?

पानी के पवित्रता को सुनिश्चित करने के लिए, पानी को उपयोग में लाने के पहले पानी को मन्त्र जाप के द्वारा पवित्र कर लेते हैं।

लेकिन अगर पानी को पवित्र करने की, योगी का क्षमता नही हो तो निम्न-लिखित पानी को उत्तम पानी समझना चाहिए।

बर्षात के आसमान के पानी को धरती के बहुत ऊपर ही अगर वर्त्तन में जमा कर लिया जाए तो वह निर्दोष एवं उत्तम पानी माना जा सकता है। और उसके सेवन से शरीर पवित्र हो सकता है। क्योंकि वह आकाश गंगा का पानी है।

एक आसमानी गंगा जल है। और दूसरा जमीनी गंगा जल है। मिलान कीजिए कौन कितना पवित्र जल है ?

किन्तु सर्वोत्तम पवित्र पानी तो नारियल (ढाब) का पानी है। यह अछूता रस पानी है। इस लिए यह पानी अर्द्ध रात्रि के ध्यान योग में, महादेव एवं महादेवी को भोग अर्पण के योग्य है।

इसके अलावे, नारंगी एवं नींबु के रस पानी भी महादेव एवं महादेवी के भोग अपर्ण के योग्य है। और इस कारण इनके रस ढाव के रस के साथ ही अर्पित किये जाते हैं।

—:o:—

हवा

कौन हवा पवित्र हो सकती है ? पहाड़ों की हवा पवित्र होती है।

इसी कारण बहुत से देवी देवताएँ (प्रेत एवं भूत) पहाड़ी की चोटियों में बसा करते हैं। चोटियों के गुफाओं एवं चोटियों के पेड़ों पर वास करते हैं। जिन्हें कुलाचारी आदिवासी पूजारी लोग पहाड़ी देवता (वुरू बोंगा) कहते हैं।

यह सत्य है।

क्योंकि—पौराणिक युगों से, पहाड़ की चोटियों पर देवी देवताएँ रहते आए हैं। और आज भी रहते हैं। यहाँ तक कि महादेव (मरंग बोंगा) भी आदि युग से आज तक, कैलाश शिखर पर रहते हैं।

पहाड़ों की तराई में पड़े पत्थरों की टिल्हों पर एवं उनपर स्थित पेड़ों पर देवी देवताएँ रहते है। जिन्हें कुलाचारी आदिवासी टिल्हा देवता (गुटु बोंगा) कहते हैं।

पहाड़ों के नीचे जंगलों से अलग, कुलाचारी आदिवासी गाँवों के सीमाने पर और किनारे पर स्थित, सरना, देशाउली, या गाँवेल का हवा पवित्र होता है। क्योंकि सरना के पेड़ों के झुंड (grove of trees) गांव से दूर हट कर होता

है। और इसके अन्दर कोई आदमी प्रवेश नहीं करते हैं। सरना, गाँव का और पहाड़ के नीचे का, छोटा कैलाश है।

यही कारण है कि महादेव अन्य पहाड़ी देवी-देवताओं के साथ माँगे, सरहुल एवं अन्य त्योहारों में पाहन या दियुरी के पूजा का भोग अर्पण नजदीक से पाने के लिए सरना में चले आते हैं।

बड़े पहाड़ एवं छोटे पहाड़ के बीच, नीचे के तलहटियों के बीच में हवा भी शुद्ध एवं पवित्र होता है। इसी कारण ही पौराणिक युगों में ऋषि एवं मुनि, तलहटियों के जंगलों के बीच कुटिया में रहकर तपस्या करते थे।

जंगलों के बीच के गाँवों ही हवा, शुद्ध एवं पवित्र होती है। उसी तरह जंगलों के किनारे के एवं निकट के खुले एवं मैदानी क्षेत्रों के गाँवों की हवा भी शुद्ध एवं पवित्र होती है।

यही कारण है कि जंगलों के बीच के ग्रामवासी एवं जंगलों के निकट के ग्रामवासी सीधे-सादे होते हैं। उनका हृदय शुद्ध हवा की तरह ही, शुद्ध पवित्र एवं सरल होता है। जिन्हें शहर वासी बुड़बक समझकर ठगा करते हैं। यह उनकी गलती है। असली में तो ठगने वाला ही बुड़बक है।

किन्तु साधना करने के स्थान के हवा को, धूप बत्ती जलाकर शुद्ध एवं पवित्र करते हैं। लोग सुबह या दिन में धूप बत्ती जलाते हैं। पर आठ बजे रात्रि के बाद ही अपने घरों में धूप बत्ती जलाना चाहिए। अपने सोने के कमरे में धूप बत्ती जलाना चाहिए।

पर सब वेलाओं से कहीं अधिक, अर्धरात्रि वेला का हवा, परम शांत एवं परम पवित्र होता है। साधक को अर्ध रात्रि में ही धूप जलाकर, शुद्ध शांत हवा को, धूप के सुगन्ध से और अधिक पवित्र बनाकर मंत्र जाप करना चाहिए।

—:o:—

स्थान

निर्जन स्थान हमेशा पवित्र होता है। निर्जन, सरना, देशाउली एवं गांवेल, निर्जन नदियों के किनार, निर्जन स्थान के पोखर, निर्जन स्थान के वृक्ष, पत्थर खोह, एवं पहाड़ी टिल्हा हमेशा पवित्र होते हैं।

यही कारण है कि इसमें बड़े देवता (प्रेत प्रभू) रहते हैं। भागाविला के निकट दियुदान एवं ढावरा एवं सिंघासो पहाड़ों में देवता रहते हैं।

नदी के किनारे के श्मशान घाट, निर्जन होने के कारण पवित्र होते हैं। यही कारण है कि नदी नालाओं के किनारे छोटे देवता, किन्नर (भूत) रहते हैं। मृतक शरीर को नदी किनारे दाह संस्कार करने से मृतक शरीर का भूत भी किन्नरों में शामिल हो जाते हैं।

वे सभी मिलकर रात्रि में तरह-तरह के क्रीड़ा करते हैं। सीटी बजाते हैं। वंशी बजाते हैं। अन्य बाजा बजाते हैं। और नाचते गाते भी हैं। इनसे आकृष्ट होकर महादेव भी उनसे खेलने चले आते हैं और इन सभी के खेलों को महादेवी (काली) अलग से निहारती है।

जलाश्यों के देवियाँ (goddess) अक्सर अकेली रहा करती है। करीब १० बजे रात के बाद उनसे खेलने के लिए पहाड़ की चोटियों से, बड़े गाछों से, प्रेत प्रभू भी पुलकाओं की तरह हवा में तैरते हुए जलाश्यों में उतर आते हैं। जिन्हें अपने शरीर को स्थूल आँखों से देखे जा सकते हैं। मेरे पिता के बनाए पोखर में ही एक देवी रहती है। जिनके साथ खेलने देवता चले आते हैं।

किन्तु साधक, कुल पुत्र अपने ही घर के एक कोठरी को, अन्यों से प्रवेश निषेध बनाकर मंत्र जाप एवं ध्यान योग के लायक पवित्र बना सकता है। और ऐसे कोठरी में देवों का आना जाना संभव हो जाता है।

—:o:—

समय

कौन सा समय पवित्र होता है ?

दिन में जागने वाले, शरीर युक्त (with body), सभी जीव, जब रात के सन्नाटे में सो जाते हैं तो शरीर मुक्त, (bodyless) सभी जीव, (भूत, प्रेत इत्यादि) रात के सन्नाटे में विचरण करते हैं।

याने आदमी और आदमियों के सम्पर्क में रहने वाले सभी जीवों के जब रात अँधेरा है, तो आदमियों के सम्पर्क से अलग रहने वाले सभी जीवों के लिए रात ही उजाला है। इस रहस्य को समझना चाहिए।

सृष्टि में एक प्रकार के जीवों के लिए मात्र सूर्य का प्रकाश ही एक उजाला है। दूसरे प्रकार के जीवों के लिए, और खासकर शरीर मुक्त (body-less) आत्माओं के लिए दिन का उजाला तो उजाला ही है पर रात भी उजाला हो जाता है। इस रहस्य को समझना चाहिए। यही आध्यात्मिक ज्ञान है।

इसी कारण, भूत, किन्नर, प्रेत, प्रभू इत्यादि छोटे-बड़े देवताओं को निशिचर भी कहा जाता है।

सन्नाटा का समय करीब ८ बजे रात से और पूर्ण सन्नाटा का समय करीब १० बजे रात से करीब ४ बजे रात (पूर्वाह्न) तक का है। यह समय पवित्र, शान्त एवं देवों के जागने का समय है।

किन्तु समयों में सबसे उत्तम समय, आधी रात का समय, करीब ११ बजे अपराह्न से १ बजे पूर्वाह्न तक का समय उत्तम होता है। यह समय ध्यान योग में, महादेव एवं महादेवी का दर्शन पाने एवं उनको भोग अर्पण करने का उत्तम समय होता है। क्योंकि इस समय मंत्र जाप शीघ्र फलदायक होता है और भोग अर्पण भी शीघ्र स्वीकार्य होता है।

—:o:—

सेवन

तो कौन सेवन पवित्र है ?

जिसके द्वारा आत्मा पवित्र हो सकती है ?

अब तक की जिंदगी के, धर्म की सारी शिक्षाओं को, कुछ समय के लिए भूल जाइये, वरन एकदम भूल जाइये।

और स्वयं में केन्द्रीभूत होकर मेरी इस शिक्षाओं से आरंभ होने वाली जिंदगी में केवल तीन शिक्षाओं को स्मरण कर लीजिए। उन्हें अमल में लाकर परीक्षा करके देखिए।

१. सब कुछ भूलकर, केवल अपने शरीर की पवित्रता का सदा स्मरण कीजिए। इसके लिए पर-स्त्री सेवन से, अपने शरीर को, सदा के लिए वंचित रखिए। अगर निज स्त्री के पवित्रता में शंका हो, तो निज स्त्री के सेवन से भी अपने शरीर को वंचित रखिए।

२. शरीर को, अधिक पवित्र रखने के लिए खुद का बनाया हुआ भोजन ही सेवन करें तो उत्तम है। अगर खुद से भोजन तैयार नही कर सकें,

तो, जो कुछ खाद्य एवं पेय पदार्थों का सेवन करें उसे अन्तःकरण के मन्त्र जाप से पवित्र कर ही सेवन करें।

३. जब भी जो कुछ भी सेवन करें, पित्तरों, देवों, अवतारियों, पैगम्बरों, इत्यादि को, अर्पण करने के पश्चात् ही सेवन करें। इससे आपके द्वारा सेवन की जाने वाली वस्तुओं का सब दोष, वे, पहले ही मिटा देते हैं। और आपका पदार्थ सेवन, प्रसाद सेवन ही हो जाता है।

हे, आदिवासियों ! हे, गैर-आदिवासियों !

चाहे, आप कितना ही गरीब क्यों न हों, आप इस बात को अवश्य मानेंगे कि, आप उसी स्थान को पसंद करेंगे, जो स्थान, आपके नजर में साफ सुथरा है। पवित्र है।

आपके मामले में, जब यह बात सही है, तो पित्तरों, देवताओं, अवतारियों एवं देव (God) के मामले में भी, यही बात सही है, कि वे उसी शरीर को पसंद करते हैं, जो शरीर उनके नजर में, साफ सुथरा है। पवित्र है। और वही आत्मा को पसंद करते हैं, जो कि पवित्र शरीर का आत्मा है।

आप यह विश्वास मानिए, कि वे (देव God) वैसे शरीर के निकट ही आते हैं, जो शरीर बिना भिन्न धर्म के, उपरोक्त प्रकार से ही पवित्र है।

अतः आप, केवल पवित्रता का स्मरण करें। और केवल पवित्र आचरण ही करें। आपके रक्षा ही नही, वरन आपके तथा परिवार के सुरक्षा के लिए केवल यही धर्म है, और यह पूर्वोक्त तीन सूत्री पवित्रता का धर्म है।

इसके अतिरिक्त आप मानें या नही मानें सभी शरीरों के सभी आत्माओं का आत्मा ही परमात्मा है।

पवित्र आत्माएँ ही महान आत्माएँ हैं। अपवित्र आत्माएँ तो मात्र आत्माएँ हैं। जो भूत (होते रहने वाले) हैं।

इस शारीरिक मृत्यु के बाद, अगर आप सीधे परमात्मा में लय होना चाहते हैं तो अभी पवित्र ही नही वरन पवित्रतम बनकर अपने आत्मा को महान आत्मा बनाइए।

इस शारीरिक मृत्यु के बाद, अगर आप मोक्ष (जन्म-मरण के बन्धन से

छूटकारा) प्राप्त करना चाहते हैं, तो अपने आत्मा को अभी से पवित्रतम बनाइये।

इस शारीरिक मृत्यु के बाद अगर आप आदमी शरीर में ही फिर पुनर्जन्म चाहते हैं, तो अपने आत्मा को अभी से पवित्र बनाइए।

इस शारीरिक मृत्यु के पश्चात् पुनर्जन्म में भी अपने कुल में ही पुनर्जन्म चाहते हैं, तो अभी से अपने आत्मा को पवित्र ही नही वरण कुलाचारी योग्य पवित्र बनाइए।

क्योंकि गैर कुलाचारी आत्मा को तो आदमी रूप में पुनर्जन्म होने पर भी जिस तिस परिवार में पुनर्जन्म हो जाता है। इससे पुत्र के द्वारा परस्परिक संबंध स्थापित नही किया जा सकता है। इससे परस्परिक सेवा संभव नही है।

क्योंकि गैर कुलाचारी आत्मा को मोक्ष प्राप्त होने पर भी, पुत्र के द्वारा उस मुक्त आत्मा का खोज संभव नही है। और उसका सेवा संभव नही है। और परमात्मा में विलीन होने पर भी कुलाचार के बिना सेवा का पूजा अर्पण संभव नही है।

और, क्योंकि, अपवित्र शरीर के अपवित्र आत्मा को तो पवित्र होने के लिए, पशु-पक्षी,कीड़े-मकोड़े इत्यादि शरीरों में पवित्र होने के लिए जन्म लेन पड़ता है।

इस कारण, विषम परिस्थितियों से बचने के लिए, और परम स्थिति को प्राप्त होने के लिए हमें योगी ही होना चाहिए। और योगी होने का साधना पवित्रता का साधना, करना चाहिए।

भागवत गीता में भी भगवान श्री कृष्ण ने, अर्जुन को योगी बनने का ही उपदेश किया था। क्योंकि :—

तपस्विभ्योऽधिको योगी,
ज्ञानिभ्योऽधिकः।
कर्मिभ्यस्याधिको योगी,
तस्मात् योगी भवार्जुनः॥

(देखें भा० गी० ६—४६)

तपस्वियों से भी बड़ा योगी है। ज्ञानियों से भी, योगी के बड़ा होने का ही मत है। और कर्म पर ही विश्वास करने वालों से भी योगी बड़ा है। अतएव हे, अर्जुन, तू योगी ही बन जा।

योगी सबमें सबसे बड़ा है। क्योंकि योग के साथ ही वे तपस्वी, ज्ञानी, और कर्मी भी है। इस कारण योगी शरीर आत्मा के साथ परमात्मा का संयोग संभव है। आसान है। इस कारण आप भी योगी ही बनें।

पर मैं, आपको, देवी की ही कृपा से, योगी से भी अधीक, बड़ा, कुलयोगी बनने के लिए ही कहता हूँ। कुलयोगी बनने के लिए ही उपदेश करता हूँ।

क्योंकि कुलयोगी शरीर आत्मा का पूर्वज आत्माओं, महान आत्माओं के संयोग के साथ ही परमात्मा का संयोग भी संभव है। आसानी से संभव है।

और कुलयोग में, पुत्र कुलयोगी के द्वारा, पित्तर कुलयोगी आत्माओं, महान आत्माओं के साथ का सतत संपर्क संभव होने के कारण, कुलयोगी पुत्र एवं पुत्री से सतत पूजा सेवा का भोग अर्पण पाना संभव है। जिसके लिए गैर कुलाचारी आत्माएँ तरसते हैं।

— : —

भावना

भावना कुलाचार का, उतना ही विशाल है,
ब्रह्माण्ड जितना, हमारे समक्ष विशाल है।
फिर आधार कुलाचार का, निराधार है,
पर पुत्र खूद ही इस आचार के आधार है।
अतः कुलाचार का जो कुल ज्ञान है,
वह पराया नही, खूद का ही ज्ञान है।
ब्रह्माण्ड में एक देव कुल है, एक निज कुल है,
समन्वय कर सकते इन्हे जिनका कि कुल है।
इसमें दूसरा, नही कोई पूजारी है,
कुल ज्ञानी पुत्र खूद ही पूजारी है।
अतः कुलाचार पुत्र का आचार सनातन है,
निज कुल का धारण पुत्र का धर्म सनातन है।
सनातन धर्म ही एक सच्ची अभिलाषा है,
भिन्न-धर्म धर्म तो मामूली एक तमाशा है।
अतः यह रहस्योद्‌घाटन हुआ है।
कोलों की दोस्ती सदा देवों से रही है।
भगवान की दोस्ती सदा कोलों से रही है।

— : —

ध्यातव्य :—निराधार से मतलब—बृहत् ब्रह्माण्ड—Extensive Universe.

आधार से मतलब—क्षुद्र ब्रह्माण्ड (हम पुत्र पुत्री), शरीर-Condensed mini Universe.

इसके आगे पांचवां भाग में पढ़ें।

लेखक,

कुलाचार

(भाग-चार)

लेखक

रामो बिरूवा

बिहार प्रशासनिक सेवा

ग्राम—भागाबिला

जिला—सिंहभूम (बिहार)

प्रथम संस्करण-१९८२—३०००

कॉपी राइट—लेखक

मुद्रक

श्री लक्ष्मी प्रेस

बाकरगंज बजाजा, पटना—८००००४

(बिहार)

फोन : ५३६१७

तापरहित प्रकाश मे
(शक्ति) ईश्वरी ईश्वर (शक्ता)
कुल के का ज्ञान

ताप युक्त
प्रकाश मे
निज कुल का ज्ञान

कुलाचार

दम्पत्ति

पुत्र

प्रत्येक दम्पत्ति के लिए प्रत्येक पुत्र के लिय उपयोगी

भारतीय खादी भंडार

कंकड़बाग, पटना-२०

न० 2031 तिथि 2[illegible]

नाम ग्राहक .....

पता .....

किस्म माल	अदद	दर	दाम रु०	पै०
मधु 7/8			6 8/00	
			6 8/00	
6 8/00	अ०		76/00	
76			7 9/00	
79				

नोट :—१. ग्राहकों द्वारा खरीदे गये खादी अथवा ग्रामोद्योगी सामानों में किसी प्रकार की खराबी होने पर बगैर इस्तेमाल किए गये रूप में ३ दिनों के अन्दर ही बदला जा सकेगा।

२. सामानों के मजबूती की जवाबदेही ग्राहकों पर होगी।

ह० व्यवस्थापक